चन्दामामा
माँ - बच्चों का मासिक पत्र

Photo by A. L. Syed

पुरस्कृत
परिचयोक्ति

खाले-पीले मेरे लाल !

प्रेषिका
श्री चन्द्रा देवी, खड़गपुर

जेमिनी चित्र

इन्सानियत

अभिनेता

दिलीपकुमार · देवानंद · बीना राय
विजयलक्ष्मी · जयंत · जैराज
शोभना समर्थ · कुमार · आगा
बद्रीप्रसाद · मोहना और ज़िप्पी

अब भारत भर में प्रदर्शित किया जा रहा है!

चन्दामामा

विषय-सूची

इतने स्वादिष्ट...?
हम इन्हें पसन्द करते हैं; क्योंकि ये बहुत कुरकुरे और जायकेदार हैं। इसके अतिरिक्त ये शरीर को पुष्ट व स्वस्थ बनाते हैं।
J. B. MANGHARAM'S
NOURISHING
Biscuits
विटामिनों से भरपूर
NOURISHING
जे. बी. मंघाराम एण्ड कंपनी - ग्वालियर.
सब जगह मिलते हैं ।
M 21
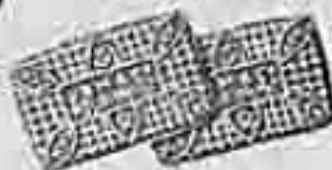
एकमे स्पेशल, नाईस, मेरी, कस्टर्ड क्रीम, नमकीन, पेटीट ब्यूरे, फिंगर क्रीम, चिल्ड्रन स्पेशल, बैटा, एकमे क्रीम, ऑरेंज क्रीम ।

दी मोदी सप्लाईज कार्पोरेशन लि.

मोदी नगर, यू. पी.

सिलाईकटाईवकढाईकला में प्रवीण होने के लिये सर्वश्रेष्ठ पुस्तकें

ALSO SOLD AT RAILWAY
-BOOKSTALLS-

1. शकुन्तलाकटाईकला 3/8
COMPLETE BOOK FOR TAILORING
2. न्यू फैशन बुक... 2/8.
3. आधुनिक कटाई 2/-.
4. शकुन्तला की नई कशीदाकारी
PART. I. II. III. EACH. 1/8.
5. नागीन कशीदाकारी ...
PART. I. II. III. EACH. 1/8.
6. कटाई शिक्षा..... 2/8.
7. स्वेटर की बुनाई... 2/-.

शकुन्तला कला निकेतन
SCHOOL OF TAILORING FOR WOMEN
१५८८ सब्ज़ी मण्डी देहली-M

बच्चों की हरेक बीमारी का सर्वोत्तम इलाज

बालसाथी

सम्पूर्ण आयुर्वैदिक पद्धति से बनाई हुई है। बच्चों के रोगों—धिम्ब-रोग, ऍठन, ताप (बुखार) खाँसी, मरोड़, हरे दस्त, दस्तों का न होना, पेट में दर्द, फेफड़े की सूजन, दाँत निकलते समय की पीड़ा आदि को आश्चर्य-रूप से शर्तिया आराम करता है। मूल्य १) एक डिब्बी का।

सब दवावाले बेचते हैं।

लिखिए:-वैद्य जगन्नाथ जी. बराच

आफ़िस : नड़ियाद

बिड़ला
कटेली चम्पा
केश तैल
अनुपम गन्ध
एवं केश शोभा
केलिये
वीर-बच्चा
बच्चों की ताकत के लिये
अनुपम टानिक
VEER BACHHA
बिड़ला लेबोरेटरीज, कलकत्ता ३०

दी बी. एन. के. प्रेस लिमिटेड
चन्दामामा बिल्डिंग्स :: मद्रास - २६
हम प्रत्येक व्यक्ति और व्यापारिक संस्थाओं को
आश्वासन देना चाहते हैं कि कलात्मक सृजन,
स्वच्छतम कार्य-निपुणता, आकर्षणीय छपाई और
शीघ्र वितरण हमारा ध्येय है।
अंग्रेज़ी, हिन्दी, तेलुगु, तमिल, कन्नड़,
मराठी, गुजराती, मलयालम और
उड़िया में छपाई का कार्य लिया जायगा।
फ़ोन :
८८५७४
BNK PRESS LTD
PRINTERS
MADRAS.26

चन्दामामा

संचालक : चक्रपाणी

इस अंक के साथ अंग्रेजी पंचांग का वर्ष समाप्त होता है। समाप्त होने से पहिले अच्छा होगा, अगर हम अपने कार्यों का सिंहावलोकन कर सकें। इससे बालकों की उन्नति के आगामी कार्य में, हम अधिक सजग हो सकते हैं।

समय व्यर्थ न कीजिए। खोया हुआ समय वापिस नहीं आता है। पर कोई ऐसा काम भी न कीजिए, जिसके कारण बाद में शर्मिन्दा होना पड़े।

यह अध्ययन का समय है; अतः ज्ञान-लाभ करना अत्यावश्यक है। पढ़ने के समय ध्यान देकर पढ़िये। और खेल के समय खेल में दिलचस्पी लीजिये। शारीरिक स्वास्थ्य का भी ख्याल रखना जरूरी है।

दिसम्बर
1955

वर्ष : 7
अंक : 4

बलशाली की सेवा

सिंह एक पशुओं का राजा
'सुन्दर वन' में वह रहता था,
बलशाली था बहुत इसीसे
आतंक जमाये रखता था ।

उसने भिजवायी यह आज्ञा—
"सभी गुफ़ा में मेरी आयें!"
सुनते ही वह कंपित भय से
पशुगण दौड़ सारे आये ।

पलक मारते उसी गुफ़ा में
पशुओं का दरबार गया लग,

किंतु वहाँ फैली थी बदबू
सड़े-गले माँसों के कारण!

कैसे सह पाते वे बदबू
मुक्त विचरते जो जंगल में,
क्रीड़ारत रहते औ' मंगल
सदा मनाते हैं जंगल में!

भालू को था भेद न मालूम
आते उसने कहा—"बाप रे!
बदबू यह कैसी भीषण है
फटती मेरी हाय नाक रे!"

गरजा सिंह बड़े ज़ोरों से
भालू को कर दिया खतम ही,

सब के सब हो गये सन्न औ'
हिम्मत कर बोला बंदर ही—

"बदबू कहने का भालू को
अच्छा प्रतिफल यहाँ मिला,
टिक सकते क्या गुलाब-चम्पा
इस खुशबू के पास भला!"

रुचे न ये भी वाक्य सिंह को
बंदर को भी दिया खतम कर;
कुछ भी कहो मुसीबत ही है—
सोचा सबने यही देखकर।

बल के मद में चूर सिंह ने
तब सियार को पास बुलाया—

★ ★ ★ ★

"बोलो, बदबू या खुशबू है,
कहो ठीक कैसा है भाया!"

'जुकाम मुझको हुआ है मालिक
फ़र्क न मैं हूँ कुछ भी पाता।"
चतुर सियार यों कहकर उससे
खड़ा रहा बस पूँछ हिलाता!

सियार की यों टली मुसीबत
मिली सीख यह नज़र करो—
बलशाली की सेवा का है
अर्थ "झूठ पर गुज़र करो!"

मुख - चित्र

इन्द्रद्युम्न महाराजा जब तक जीवित रहे, तब तक धार्मिक काम करते रहे। और जब दिवंगत हुए तो वे स्वर्ग में भी सुख से रहे। आखिर, स्वर्ग के देवताओं ने इन्द्रद्युम्न को भूलोक भेज दिया।

मनुष्य अपने सत्कर्म के अनुसार स्वर्ग में जितने दिन चाहे, उतने दिन रह सकता है। इन्द्रद्युम्न ने चिरंजीवी मार्कण्डेय मुनि के पास जाकर कहा— "मुनीश्वर! मेरा नाम इन्द्रद्युम्न है। कभी आपने मेरा नाम सुना है?" मार्कण्डेय ने कहा—"सुना तो नहीं है।" "कोई ऐसा भी है, जिसकी आयु आपसे अधिक है?"—इन्द्रद्युम्न ने पूछा।

"हिमालय में प्रावारकर्ण नाम का एक उल्लू है।" मार्कण्डेय ने कहा। इन्द्रद्युम्न ने एक घोड़े का रूप धारण किया और मार्कण्डेय को अपनी पीठ पर बैठ लिया। हिमालय जाकर उस उल्लू से मिलकर पूछा—"क्या तुम मुझे जानते हो?" उल्लू ने कहा—"इन्द्रद्युम्न का नाम तो सुना नहीं है; पर यहाँ पास ही इन्द्रद्युम्न नाम का एक सरोवर है। उसमें मुझ से पहिले पैदा हुआ नाड़ीजंघ नाम का एक बगुला है। उससे पूछने पर मालूम हो सकेगा। उल्लू को भी पीठ पर चढ़ाकर इन्द्रद्युम्न सरोवर के पास गया और वहाँ नाड़ीजंघ से मिला।

"इन्द्रद्युम्न का नाम मैंने तो नहीं सुना है। इसी सरोवर में मुझ से बड़ा एक कछुआ है। उससे पूछकर देखिये"—बगुले ने कहा।

जब कछुवे से भी यही प्रश्न किया गया तो उसने आँसू पोंछते हुए कहा— "इन्द्रद्युम्न को भला मैं क्यों नहीं जानता? उन्होंने हज़ार यज्ञ यहाँ किये थे। उनके दिये हुये गौओं की उछल-कूद से ही यह सरोवर बना है।"

कछुवे के यह कहते ही देवताओं ने इन्द्रद्युम्न के लिए विमान भेजा। बगुले, उल्लू, और मार्कण्डेय ऋषि को उनकी जगह छोड़कर, इन्द्रद्युम्न, विमान में स्वर्ग वापिस चले गये और वहाँ सुख भोगते जीवन-यापन करने लगे।

ऊँच-नीच

जब ब्रह्मदत्त काशी का राजा था, तब बोधिसत्व एक शेर के रूप में पैदा हुए। वह शेर एक पहाड़ी गुफ़ा में अपनी पत्नी के साथ रहा करता था। एक दिन शेर को भूख लगी। वह पहाड़ से नीचे की ओर देखने लगा। पहाड़ के नीचे, हरे मैदान में, झील के किनारे, उसे कई खरगोश, हरिन वगैरह, खेलते-कूदते नज़र आये। तुरंत शेर पहाड़ से उतरा और उनकी ओर लपका। उस तरफ़ जा ही रहा था कि वह झील के पासवाले दलदल में फँस गया। इस बीच में, शेर को आते देखकर, खरगोश, हरिन वगैरह बहुत डर गये और वहाँ से भाग गये।

जितना दलदल से बाहर निकलने का शेर प्रयत्न करता, उतना ही वह फँसता जाता। इसलिए वह यह प्रतीक्षा करता निश्चल खड़ा हो गया कि कोई आता-जाता उसकी मदद करेगा। पर उस तरफ़ कोई नहीं आया। एक सप्ताह बीत गया। शेर भूख के कारण व्याकुल था। तब एक लोमड़ी पानी पीने के लिए झील के पास आया। वह शेर को देखते ही यकायक रुक गया।

शेर ने लोमड़ी को देखकर कहा—"अरे लोमड़ी भइया! सप्ताह से इस दल-दल में फँसा पड़ा हूँ। मरने की नौबत आ रही है। मुझे जैसे-तैसे मेहरबानी करके इस दल दल से बचाओ।"

"तुम तो भूखे हो। मैं तुम्हारी मदद तो कर सकती हूँ, पर कहीं तुम मुझे मारोगे तो नहीं? तुम्हारा कैसे विश्वास किया जाय?"—लोमड़ी ने कहा।

"जान बचानेवाले की जान लूँगा? अगर तुमने मुझे बचा दिया तो मैं ज़िन्दगी

भर तुम्हारा कृतज्ञ रहूँगा। मेरा विश्वास करो"—सिंह ने गिड़गिड़ाते कहा।

लोमड़ी ने, शेर का विश्वास कर सूखी लकड़ियाँ लाकर दलदल में डाल दीं। उन पर पैर रखकर, शेर जैसे-तैसे बाहर निकल आया। फिर दोनों मिलकर शिकार खेलने गये। जङ्गल में घूम-घामकर आखिर शेर ने एक जानवर मारा। उसको शेर और लोमड़ी ने आपस में आधा आधा बाँटकर खा लिया।

"हम अब से भाई भाई हैं। क्यों तुम एक जगह रहो, और मैं किसी और जगह? अपने परिवार को मेरी गुफ़ा में ले आओ। सब मिल-मिलाकर रहेंगे।"—शेर ने कहा। लोमड़ी भी मान गयी, और उसी दिन वह अपनी पत्नी के साथ शेर की गुफ़ा में आयी और मज़े से रहने लगी।

शेर यद्यपि लोमड़ी को भाई की तरह देखता था, तो भी उसकी पत्नी लोमड़ी की पत्नी को नीच ही समझती थी। परन्तु चूँकि लोमड़ी की पत्नी अपनी जात को नीची समझती थी, इसलिए दोनों परिवारों में कोई खास मनमुटाव न हुआ।

परन्तु होते होते, शेर और लोमड़ी के बच्चे पैदा हुये। उन दोनों के बच्चे आपस

में मिल-जुलकर खेलने-कूदने लगे। यह सब शेरनी को नहीं भाता था। लोमड़ी के बच्चे भी यह न मानते थे कि उनकी जात शेर की जात से नीची है। वे मजे में शेर के बच्चों के साथ रहते। शेर के बच्चे भी ऊँच-नीच का भेद न मानते थे। वे लोमड़ी के बच्चों से हिल-मिलकर रहते। खूब शोर मचाते। और दिन भर खेलते रहते

शेरनी यह ज्यादह दिन न देख सकी। उसने अपने बच्चों को अलग बुलाकर कहा—"हम बड़े घर के हैं। तुम इतने हिल-मिल कर लोमड़ी के बच्चों से न खेला करो। हम ऊँची जात के हैं; वे नीच जाति के हैं। उन्हें दूर ही दूर रखा करो।"

लोमड़ी की पत्नी को, शेरनी की मनोवृत्ति देखकर बड़ा दुःख हुआ—उसने इस बारे में पति से कहा। लोमड़ी को भी बहुत रंज हुआ। जब अगले दिन लोमड़ी शेर के साथ शिकार करने जा रही थी तो उसने कहा—"आप राज-परिवार के हैं। हम मामूली हैं। इसलिए हम दोनों का मिलकर रहना अच्छा नहीं है। अगर आपकी इजाजत हो तो हम अपनी जातवालों के साथ रहने लगेंगे।"

शेर ने लोमड़ी में यह आकस्मिक परिवर्तन देखकर, आश्चर्य से उसका कारण पूछा। लोमड़ी ने सारी हालत सुना दी। गुफा वापिस आते ही शेर ने अपनी पत्नी से पूछा—"सुना है, तुम लोमड़ी के बच्चों को देखकर, नफ़रत करने लगी हो!"

"हाँ! मैं नहीं चाहती कि नीच जात के बच्चे हमारे बच्चों के साथ खेलें कूदें, बराबरी करें। मुझे नहीं मालूम कि लोमड़ी ने आप पर क्या जादू कर रखा है! अगर आप चाहते हैं तो आप लोमड़ी के साथ रहिये। मैं नहीं चाहती कि मेरे बच्चे इनकी सोहबत में रहकर दिन भर खेलते-कूदते रहें और बिगड़ जायें।"—शेर की पत्नी ने कहा।

"यह बात है! लोमड़ी ने मुझपर क्या जादू किया है, सुनो। याद है, मैं एक बार सप्ताह भर घर न आया था। सप्ताह भर, भूखा-प्यासा मैं दल्दल में फँसा पड़ा रहा। जब मेरी जान जा रही थी, और किसी ने मेरी मदद नहीं की थी, तब इसी लोमड़ी ने अक़्लमन्दी से, मुझे दल्दल में से निकालकर मेरे प्राण बचाये थे। अगर उस दिन यह लोमड़ी मेरी रक्षा न करती तो न मैं होता, न हमारे बच्चे ही। प्राण-रक्षा करनेवालों के साथ ऊँच-नीच का बर्ताव करना बहुत बड़ा अपराध है। यह तुम भूलती हो कि उनका अपमान करना सगे बन्धुओं का अपमान करने के बराबर है।"—शेर ने कहा।

शेर की ये बातें सुनकर शेरनी बहुत शर्मिन्दा हो गयी और दौड़े दौड़े लोमड़ी की पत्नी के यहाँ आकर उससे क्षमा माँगी। बाद में, सात पीढ़ियों तक, शेर की सन्तान, और लोमड़ी की सन्तान, एक ही गुफा में आपस में खेलते-कूदते, साथ साथ मिल जुलकर रहीं।

[५]

[मन्दरदेव और शिवदत्त का तो परिचय हो ही गया था न ? शिवदत्त बता रहा था कि कुण्डलिनी द्वीप में किस तरह मनोरंजन के कार्यक्रम रचे जाते थे, कैसे देश में अराजकता पैदा हो गयी थी और आखिर शत्रुओं ने राजधानी को किस प्रकार घेर लिया था और किस हालत में नरवाहन को सेना के नेतृत्व की जिम्मेवारी सौंपी गयी थी। आदि आदि—बाद में :]

शिवदत्त ज्यों ज्यों कहता जाता था, त्यों त्यों मन्दरदेव का आश्चर्य बढ़ता जाता था। उस महासमुद्र में वे नौकायें किस तरफ़ जा रही थीं, इस बारे में भी वह बेख़बर था। आखिर उसने शिवदत्त से पूछा—"क्यों शिवदत्त! उस हालत में तुम खुद क्यों नहीं सेनापति बन गये? और क्यों नरवाहन मिश्र को सेनापति बनने से नहीं रोका? अगर तुम ही उस वक्त सेनापति बन जाते तो सब ठीक हो जाता!"

यह सुन शिवदत्त ने हँसकर कहा—"मन्दरदेव! उन परिस्थितियों में यह उतना आसान काम न था। मैं भला स्वयं कैसे पूछता कि मुझे ही सेनापति का पद दिया जाय? पर एक धूर्त को यह जिम्मेवारी का काम सौंपना ख़तरे से खाली न था। मैं यह सोचने लगा कि क्या किया जाय? हम अजीब हालत में थे। मुझे चिन्तित देख समरसेन ने पूछा—"शिवदत्त! क्या सोच रहे हो? अगर

कुछ कहना चाहते हो, तो बिना झिझके कहो!" तब मैंने कहा—

"सेनापति! मैं यह सोच रहा हूँ कि इन परिस्थितियों में आपको स्वयं सेना का नेतृत्व करना चाहिये। दुश्मनों की ताक़त के बारे में, जो उनके भेजे हुए संदेश से ज़ाहिर है, हम लापरवाह नहीं रह सकते। अगर भगवान न करें, हमारी सेना को, उनके हाथ थोड़ी भी चोट पहुँची, तो और भी हमारे विरुद्ध अपना झंडा उठा देंगे। उनको बगावत करने का अच्छा मौका मिलेगा। इसलिए आप ही स्वयं सेना का नेतृत्व स्वीकार कीजिए!" समरसेन ने एक क्षण सोच-विचारकर कहा—"अच्छा, तो ऐसा ही करूँगा!" परन्तु इस बीच में वहाँ नरवाहन मिश्र आ पहुँचा। उसको देखते ही समरसेन ने कहा—"नरवाहन! मैं तुम्हारे लिए खबर भेजने की ही सोच रहा था। ख़ैर, तुम तुरन्त जाकर सेना को तैयार करवाओ। एक घंटे में कम से कम दो हज़ार सैनिकों को इकट्ठा कर लिया जाना चाहिए। क्योंकि शाम होते होते दुश्मनों का नामो-निशान भी बाकी नहीं रहना चाहिए!"
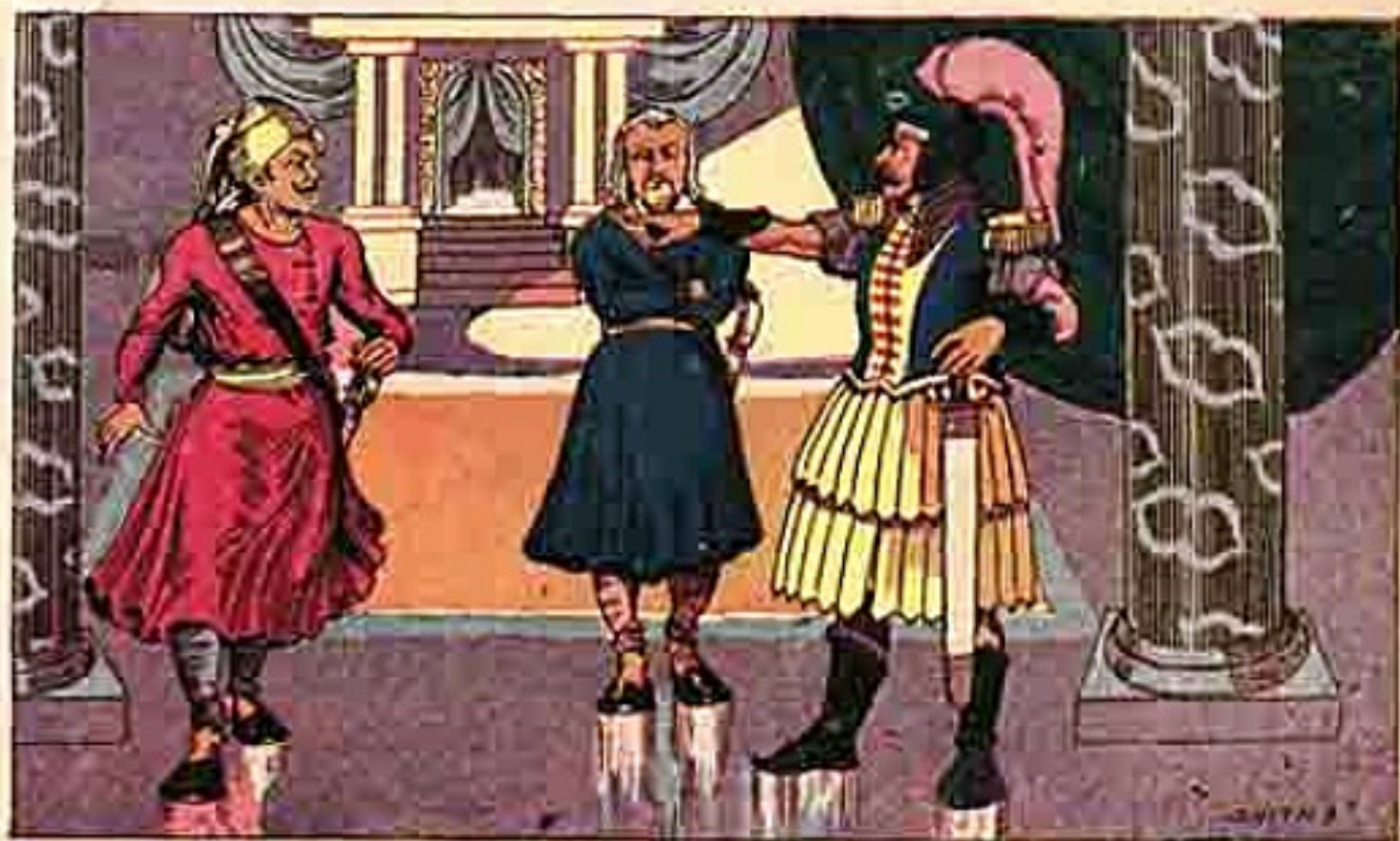
वहां से जाते जाते नरवाहन मिश्र, मेरी ओर देख, थोड़ा मुस्कुराया। उसकी मुस्कराहट ज़हरीली थी; उसमें ईर्ष्या भरी थी! परन्तु उस मुस्कराहट का वस्तुतः क्या रहस्य था, मैं उस समय ठीक तरह न जान सका।

समरसेन ने मेरी तरफ़ मुड़कर कहा—"शिवदत्त! तुम भी अपने आदमियों को तैयार करो। किसी न किसी काम आयेंगे ही ये लोग। कम से कम तलवारों की जंग तो साफ़ होगी।"

मैंने देखते देखते पचीस सैनिकों को जमा कर लिया और उनको हथियार वगैरह देकर तैयार कर दिया। महासेनानी समरसेन के नेतृत्व में शत्रुओं से युद्ध किये अर्सा हो गया था। फिर लड़ने का मौका मिलता देख मैं बहुत खुश था।

एक घंटा गुज़र गया। नरवाहन मिश्र सेना तैयार कर, उसकी सूचना हमें देने आयेगा, हम दोनों—मैं और समरसेन, इसकी प्रतीक्षा कर रहे थे। एक घंटे के बाद नरवाहन मिश्र आ भी गया। उसकी हालत देखकर हम दोनों को बड़ा आश्चर्य हुआ। उसकी मियान में तलवार न थी। उसके कपड़े भी फटे हुए थे। बाल बिखरे हुए

थे। चेहरे पर छोटे-मोटे घाव भी दिखायी दे रहे थे। वह बहुत डरा हुआ नज़र आता था। "क्यों नरवाहन! क्या हुआ है! क्यों इस तरह दिखायी देते हो!"—समरसेन ने चिन्तित हो उससे पूछा।

नरवाहन ने बोलने का प्रयत्न किया। परन्तु ऐसा लगा, जैसे उसका गला रुंध गया हो। "लगता है, अब हालत हमारी काबू में नहीं है। अच्छा होगा कि हम किसी सुरक्षित स्थान पर भाग जायें, वरना खतरा है।"—नरवाहन ने रुंधी आवाज़ में कहा। यह सुनते ही समरसेन इस तरह उठा, जैसे सांप पूँछ के दबते ही फुँकार मारता फण उठाता है। मैंने उसमें इतना गुस्सा और जल्दबाज़ी कभी न देखी थी।

"अपने ही राज्य में, और मैं, एक और सुरक्षित स्थान को भाग जाऊँ! इस कुण्डलिनी द्वीप का चप्पा चप्पा मेरे लिए सुरक्षित है, वह मेरी रक्षा कर सकता है। कहीं तू पागल तो नहीं हो गया है!"—समरसेन ने कहा।

नरवाहन मिश्र कँप-सा गया। फिर समरसेन कुछ कहने ही जा रहा था कि क़िले की ड्योढ़ी पर भयंकर शोर-शराबा सुनायी देने लगा। हम इस तरह कांप उठे, जिस तरह वृक्ष तूफ़ान में कांपते हैं।

"यह शोर क्या है!"—समरसेन ने नरवाहन को तिरछी नज़र से देखते हुए रौबीली आवाज़ में पूछा।

"सेनानी! यही भयंकर खबर मैं बताने जा रहा था। सैनिक भी जनता के साथ मिल गये हैं!" "राजा को गद्दी से उतार दिया जाना चाहिए!" के नारे लगाते लगाते वे शहर की गली गली में चक्कर लगा रहे हैं; आन्दोलन कर रहे हैं। मैंने जब सैनिकों को समझाने का प्रयत्न

किया तो उन्होंने मेरी यह हालत कर दी। कुण्डलिनी देवी की कृपा है कि जान बचाकर मैं आप तक आ सका!"—नरवाहन ने ज़ोर से साँस लेते हुए कहा।

यह सुनते ही समरसेन पर बिजली-सी गिर पड़ी। समरसेन को यह जानकर बहुत ही दुःख हुआ कि जिस जनता के लिए उसने मांत्रिकों के द्वीप में हर तरह की मुसीबतें झेली थीं, जिनके लिए उसने समुद्र से लोहा लिया था, वही जनता आज उसकी आज्ञा का तिरस्कार कर रही थी। उस बिचारे को यह न मालूम था कि तब से देश में क्या क्या परिवर्तन हो गये थे, और क्या क्या उलझी हुई परिस्थितियाँ पैदा हो गयी थीं।

"समरसेन! आप धीरज न खोइये! जैसे तैसे इस ख़तरे का मुक़ाबला करने का उपाय सोचिये।"—मैंने कहा।

समरसेन ने आह भरते हुए कहा—"शिवदत्त! यह न समझो कि मैं डर रहा हूँ या धीरज खो रहा हूँ। जनता को इस कृतघ्न रूप से बग़ावत करता देख मेरा दिल एक दम अंगारा हो रहा है। बस! इसके सिवाय और कुछ भी बात नहीं है।"

मैं उसको कैसे दिलासा देता! मैंने नरवाहन की ओर देखा। वह मूर्ति की तरह स्थिर खड़ा था। उसी समय ड्योढ़ी पर से और भी ज्यादह शोर-शराबा सुनाई पड़ा। एक पहरेदार हमारे पास दौड़ा दौड़ा आया। जब मैंने उससे पूछा कि क्या बात है, उसने कहा—"महा सेनानी! आफ़त आ पड़ी है। लोग ड्योढ़ी का दरवाज़ा तोड़ रहे हैं।"

समरसेन का सिर झुका रह गया। इस में भी सन्देह था कि उसने उस पहरेदार की बात सुनी थी कि नहीं! मैंने ज्योंही

बोलना चाहा तो उन्होंने मेरी तरफ़ सिर उठाकर देखा। उनके देखने का मतलब भी मेरी समझ में आ गया था।"

"मृगशालाधिपति को तुरन्त यहाँ बुलाकर लाओ।"—मैंने पहरेदार को आज्ञा दी। थोड़ी देर में वहाँ मृगशालाधिपति आ गया। उसके आते ही मैंने आज्ञा दी—"पिंजड़ों में जितने क्रूर जन्तु बन्द हैं, उनको तुरन्त बाहर छोड़ दो। पर यह ख्याल रहे कि वे महल के आँगन और ड्योढ़ी से बाहर न जाने पावें। जरूरत पड़ने पर, उनको फिर पिंजड़ों में बन्द करने के लिये नौकरों को तैयार रहने के लिये कहो।"

मृगशालाधिपति को काटो तो खून नहीं। वह हिचकता-झिझकता समरसेन की ओर देखने लगा। "शिवदत्त की आज्ञा मेरी आज्ञा है, उसका ठीक तरह पालन करो।"—समरसेन ने कहा।

"पर, महाराज! अगर एक बार उन क्रूर जन्तुओं को छोड़ दिया गया तो बाहर खड़ी जनता पर...."

मृगशालाधिपति कुछ कहना चाहता था। पर मैंने गुस्से में कहा—"यह सब तेरे लिये अनावश्यक है। जनता के लिये पहिले यह जानना आवश्यक है कि ड्योढ़ी तोड़ देने से उनकी क्या हालत होगी।"

मृगशालाधिपति फ़ौरन चला गया। मैंने नरवाहन की ओर देखा। वह दाँत कटकटाता क्रुद्ध नज़र से मेरी ओर देख रहा था। उसकी क्या चाल है, जनता और सैनिकों के बग़ावत में उसका कितना हाथ है—इन प्रश्नों का उत्तर मुझे तब न मिल सका।

दो चार मिनट में, शेरों और हाथियों के गर्जन से हमारे कान फूट-से गये। क्रूर जन्तुओं के चीत्कार से सारा महल गूँज रहा था। वह बड़ा भयंकर दृश्य था।

समरसेन झट खड़ा होकर, जल्दी जल्दी, महल के सामने बने हुए, ऊँचे मण्डप पर गया। वहाँ से महल के सामने की ख़ाली जगह, ड्योढ़ी के सीखचे, और उसके बाद गली में शोर-शराबा करती जनता, सब दिखाई दे रहे थे।

समरसेन के पीछे पीछे मैं भी मण्डप में आकर खड़ा हो गया। पिंजड़ों से छोड़े गये, जंगली क्रूर-जन्तु, आंगन में इधर उधर विहार कर रहे थे। कई, ड्योढ़ी के सीखचों में से बाहर खड़ी जनता पर चिंघाड़ चिंघाड़ कर पंजा दिखा रहे थे।

"शिवदत्त! तुम्हें अच्छा उपाय सूझा।" कहते कहते मेरी तरफ़ देखकर वे मुस्कराने लगे। "इन क्रूर जन्तुओं के डर के कारण ही वे ड्योढ़ी को तोड़ने का साहस नहीं कर पा रहे हैं। परन्तु यह तत्कालिक उपाय ही है। इस अराजकता के कारण और उसके मूल नेता कौन हैं? इसका कुछ समझ में नहीं आ रहा है।"—समरसेन ने पीछे मुड़कर देखते हुए कहा।
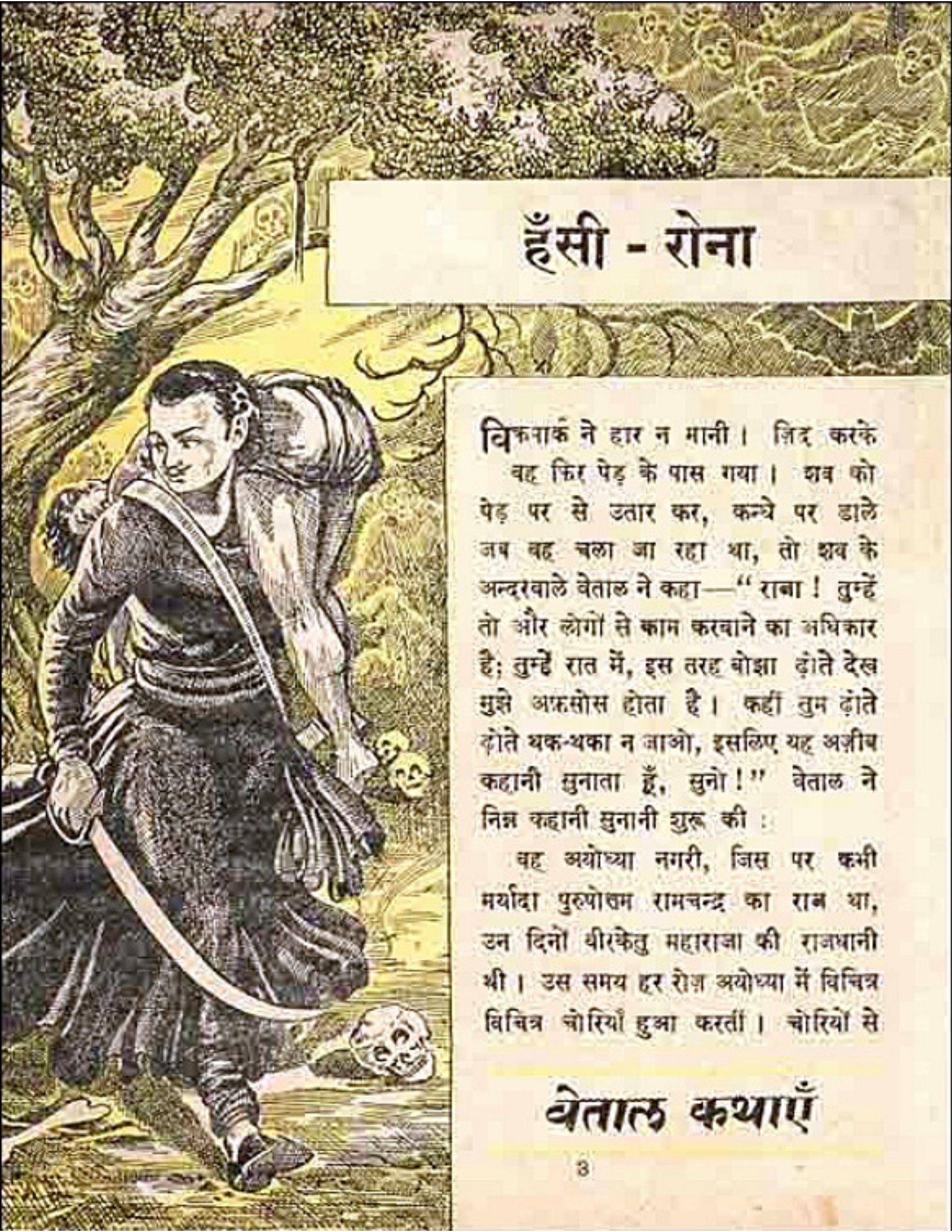
नरवाहन हमारे पीछे, हाथ बाँधकर खड़ा था। उसने हमारे पास आकर कहा—"सेनानी! वे आन्दोलन कर रहे हैं कि राजा गद्दी छोड़ दें। उनके कौन नेता हैं, यह मैं भी नहीं जानता हूँ।"

समरसेन कुछ देर तक तो चुप रहा; फिर उसने कहा—"देश में इतनी अराजकता फैली हुई है, इसकी पहिले मैंने कल्पना भी न की थी। राजधानी के बाहर शत्रु हैं और अन्दर जनता में असंतोष है। ये चाहते हैं कि राजा गद्दी पर से उतार दिया जाये, और वे राजगद्दी चाहते हैं। यही मौजूदा हालत है। क्यों शिवदत्त! इस में तुम्हारी क्या राय है?" उन्होंने मुझसे पूछा।

(अभी और है।)

विक्रमार्क ने हार न मानी। ज़िद करके वह फिर पेड़ के पास गया। शव को पेड़ पर से उतार कर, कन्धे पर डाले जब वह चला जा रहा था, तो शव के अन्दरवाले वेताल ने कहा—"राजा! तुम्हें तो और लोगों से काम करवाने का अधिकार है; तुम्हें रात में, इस तरह बोझा ढ़ोते देख मुझे अफ़सोस होता है। कहीं तुम ढ़ोते ढ़ोते थक-थका न जाओ, इसलिए यह अजीब कहानी सुनाता हूँ, सुनो!" वेताल ने निम्न कहानी सुनानी शुरू की :

यह अयोध्या नगरी, जिस पर कभी मर्यादा पुरुषोत्तम रामचन्द्र का राज था, उन दिनों वीरकेतु महाराजा की राजधानी थी। उस समय हर रोज़ अयोध्या में विचित्र विचित्र चोरियाँ हुआ करतीं। चोरियों से

वेताल कथाएँ

तंग आकर जनता ने राजा के सम्मुख निवेदन किया—"महाप्रभू! हमें जैसे तैसे चोरों के ख़तरे से बचाइये। लाख प्रयत्न करने पर भी चोरों का ठिकाना हमें नहीं मालूम हो रहा है। उनका पकड़ा जाना तो अलग: वे दिखायी भी नहीं देते हैं, परंतु दिन-दहाड़े चोरी करते रहते हैं!"

वीरकेतु ने जनता को आश्वासन देकर भेज दिया और अपने कुछ सिपाहियों को वेष बदलकर, नगर में रात को गश्ती लगाने के लिये भेज दिया। उनकी ख़बरदारी के बावजूद, चोरियाँ पहिले की तरह होती जाती थीं। आख़िर एक चोर भी सिपाहियों के हाथ न लगा।

वीरकेतु जान गया कि चोरी करनेवाले बहुत अक़्लमन्द और चालाक हैं और वे उसके सिपाहियों के हाथ न आयेंगे। स्वयं वह चोरों को पकड़ने के लिए निकल पड़ा। जब वेष बदलकर वह रात में कहीं चला जा रहा था तो उसको एक आदमी अजीब हरकतें करता दिखायी दिया।

राजा उसकी तरफ़ गया। राजा को पास आता देख उसने पूछा—"तू कौन है?"

"चोर!"—राजा ने कहा।

"तो तू हमारा साथी है न! आ, घर चलें; तेरी अच्छी आवभगत करूँगा।"—उस व्यक्ति ने कहा।

राजा उसके साथ उसके घर गया। उसका घर जंगल में, ज़मीन के नीचे था। वहाँ जाने के रास्ते भी ख़ुफ़िया थे। डाकू, राजा को एक कमरे में बिठाकर अन्दर चला गया। तब एक दासी ने आकर राजा से कहा—"तुम कौन हो? अगर तुम्हें इस चोर का पता-ठिकाना मालूम हो गया तो जान लो कि तुम्हारी ज़िन्दगी ख़तम हो गयी। तुरंत यहाँ से तुम भाग जाओ....!"

राजा तुरंत वहाँ से चल पड़ा। जल्दी-जल्दी राजधानी में जाकर, हथियारबन्द सिपाहियों को लेकर वहाँ आ पहुँचा। डा और सिपाहियों में घमासान युद्ध हुआ। यद्यपि डाकू अकेला था, तोभी वह सिपाहियों से काफ़ी देर तक बहादुरी से लड़ता रहा; उसने कई सिपाहियों को ढ़ेर भी कर दिया। आख़िर उसको राजा के सामने हार माननी पड़ी। वह पकड़ा गया।

वीरकेतु, डाकू के हाथ पैर बँधवाकर ले गया। उस पर मुक़द्दमा चलाया गया। यह साबित हुआ कि वह डाकू ही बहुत दिनों से अयोध्या में डकैतियाँ कर रहा था। चोरी गया माल भी बरामद हुआ। राजा ने डाकू को सज़ा दी।

जब डाकू को राज-सैनिक दण्ड देने के लिए नगर से बाहर ले जा रहे थे, तो अयोध्या के सब से बड़े व्यापारी सेठ, रत्नदत्त की लड़की रत्नवती ने डाकू को देखकर, अपने पिता को बुलाकर कहा—"पिताजी! मेरा उस डाकू से विवाह कर दीजिये!" रत्नदत्त यह सुनकर मूर्छित-सा हो गया।

रत्नवती उसकी इकलौती लड़की थी और बहुत दिनों बाद पैदा हुई थी। उसे बड़े लाड़-प्यार से पाला-पोसा था। रत्नवती का सौंदर्य देखकर, कई करोड़पति सेठों के पुत्र उससे विवाह करने के लिए आये थे। पर रत्नवती ने उनसे विवाह न किया। वह शादी करनी न चाहती थी।

"क्यों बेटी! तूने तो बड़े बड़े लखपतियों से शादी करने से इनकार कर दिया था! अब क्यों इस दुष्ट धूर्त डाकू से विवाह करना चाहती है!"—रत्नदत्त ने पूछा।

रत्नवती ने पिता की एक न सुनी। जब अनेक राजकुमार, रईस, उमराव उससे विवाह करने के लिए आये थे, तब पिता ने

उसको शादी करने की सलाह दी थी। परंतु तब भी उसने पिता की सलाह न मानी थी। वह अपनी बात की पक्की थी।

"चाहे वह चोर हो, चाहे उसे सज़ा मिल रही हो, मैं उससे ही शादी करूँगी। मैंने उसे ही अपना पति चुना है। अगर आप चाहते हैं कि मेरा विवाह हो, तो मेरा उससे ही विवाह कीजिये। अगर आप यह नहीं कर सकते हैं तो मैं भी उसके साथ मर जाऊँगी!"—रत्नवती ने कहा।

यह सुन रत्नदत्त को बड़ा रंज हुआ। उसे मालूम था कि उसकी लड़की अपने निश्चय को किसी भी हालत में बदलनेवाली न थी। उसने महाराजा वीरकेतु के पास जाकर कहा—"महाप्रभु! डाकू को आप मुझे सौंप दीजिये। मैं आपको अपना सारा धन दे दूँगा।" पर राजा ने न माना। वह हरगिज़ न चाहता था कि ख्वाहमख्वाह उस डाकू को छोड़ दे, जिसने लोगों के नाक में दम कर रखा था। हताश हो, रत्नदत्त घर वापिस आ गया। उसकी लड़की साज-शृंगार कर दुल्हिन बनी बैठी थी।

"बेटी! मैं कामयाब न हो सका। डाकू को छोड़ने के लिए राजा ने न माना। मैंने
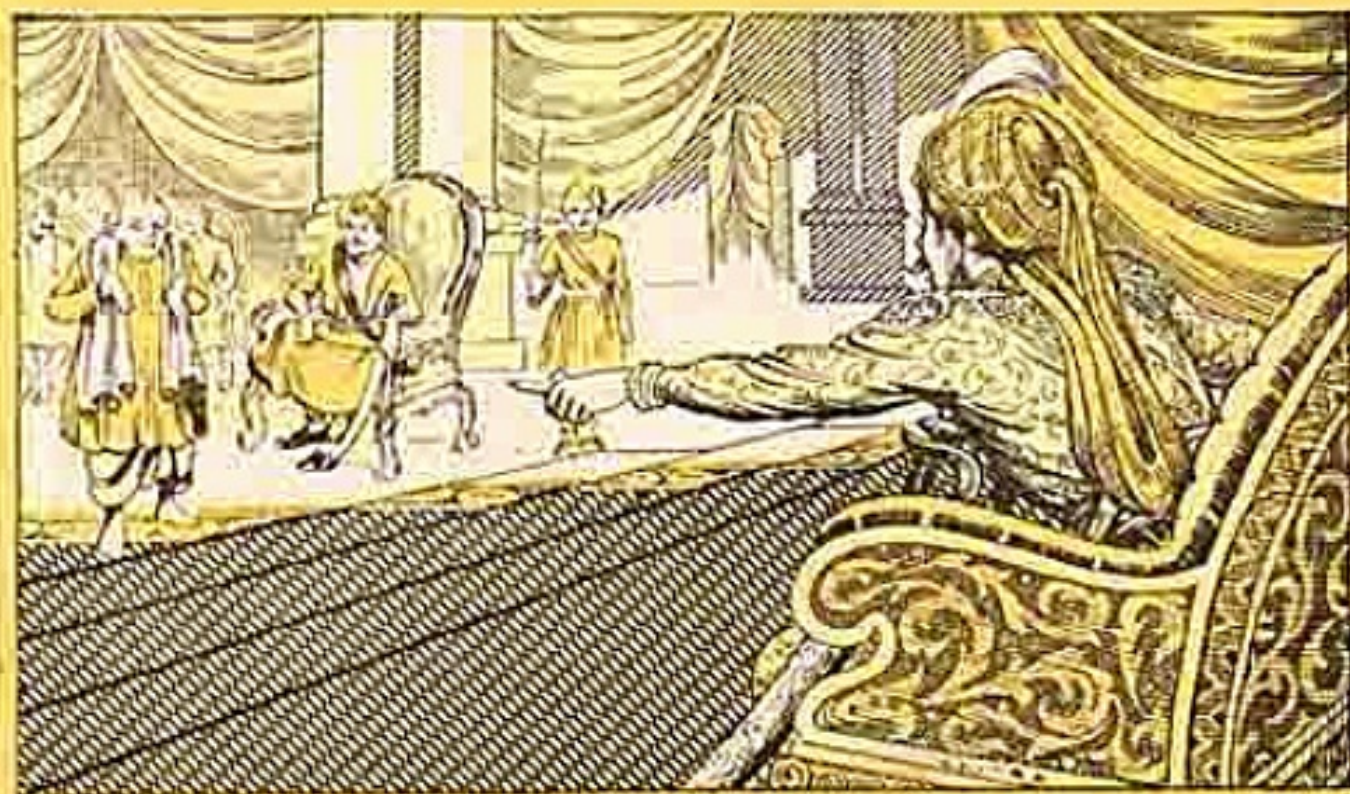
यह भी कहा कि मैं अपना सर्वस्व दे दूँगा; परंतु वे न माने। तेरी यह शादी नामुमकिन है!"—रत्नदत्त ने अपनी लड़की से कहा।

"विवाह न भी हुआ तो मैं सति हो जाऊँगी!"—रत्नवती ने कहा।

रत्नवती पाल्की में चढ़कर वध्यस्थल पर गयी। उसके साथ रोते-धोते उसके माँ-बाप भी गये। उनके पहुँचते पहुँचते जल्लादों ने डाकू को फाँसी पर लटका दिया था। वह मरता-जीता कराह रहा था।

रत्नदत्त ने अपनी लड़की को डाकू के पास ले जाकर कहा—"देखो बेटा! मेरी लड़की तुमसे ही शादी करने की ज़िद किये बैठी है।" यह सुन रत्नवती की ओर देखते देखते डाकू की आँखों में आँसू छलक आये। फिर वह एक क्षण मुस्कराया और बाद में उसके प्राण-पखेरू उड़ गये।

रत्नवती, अपने "पति" का शरीर लेकर श्मशान को गयी; वहाँ चिता बनाकर, उसके साथ स्वयं भी उस पर बैठ गयी।

केवल मन में पति स्वीकार करने के कारण रत्नवती को सती होता देख, कालभैरव ने स्वयं प्रत्यक्ष होकर कहा—"बेटी! तेरी पति-भक्ति असाधारण है। तू जो वर चाहे, माँग ले!"

"देव! मैं अपने माँ-बाप की इकलौती लड़की हूँ। बड़े लाड-प्यार से पाल-पोसकर मुझे बड़ा किया; इसलिए मेरे जाने पर वे फूट-फूटकर रोयेंगे। आप उनको सन्तान देने का अनुग्रह कीजिये। सन्तान को पा वे मुझे भूल जायेंगे!"—रत्नवती ने कहा।

कालभैरव ने हँसकर कहा—"तेरी इच्छा पूरी कर दूँगा। पर क्या तू अपने लिए कुछ नहीं चाहती?"

"मुझे सिवाय अपने पति के साथ रहने के और कुछ नहीं चाहिये! वही मेरे लिए सब कुछ है।"—रत्नवती ने कहा।

"मैं तेरी इस इच्छा को भी पूरी कर दूँगा।" कहते कहते कालभैरव ने मरे हुए डाकू को जिला दिया और स्वयं अन्तर्धान हो गया।

उसके दूसरे ही क्षण डाकू उठ बैठा। रत्नदत्त ने डाकू को घर ले जाकर, उसके साथ अपनी लड़की का विवाह बड़े धूमधाम के साथ कर दिया।

बेताल ने यह कहानी सुनाकर पूछा—"राजन्! फाँसी पर लटका हुआ डाकू, यह जानकर कि रत्नवती उससे विवाह करना चाहती है, क्यों रोया और फिर क्यों हँसा? अगर जानकर भी तुमने इसका उत्तर न दिया तो तुम्हारा सिर फूट जायगा!"

"इन अकारण बन्धुओं का ऋण चुकाये बिना ही चला जा रहा हूँ,—यह सोचकर डाकू पहिले तो रोया; परंतु उस लड़की को, जिसने बड़े बड़े आदमियों से विवाह करने से इन्कार कर दिया था, उसे पति चुनता देख, हँसी आ गयी!"—विक्रमार्क ने जवाब दिया।

राजा का मौन-भंग होते ही बेताल अदृश्य हो गया और पेड़ पर जा बैठा। विक्रमार्क हताश हो वहीं खड़ा रह गया।

गरीब की दावत

★

एक दिन सवेरे कुछ काश्तकार गप्पें लगा रहे थे। गाँव का बनिया यकायक रुका और डींग मारने लगा कि ज़मीन्दार ने उसे काम पर बुलवाया था।

यह सुन एक ग़रीब काश्तकार ने कहा—"इसमें कौन-सी बड़ी बात है! अगर ज़िद पकड़ ली तो मैं भी ज़मीन्दार के घर दावत खाकर आ सकता हूँ....!"

"शायद इस जन्म में नहीं।"—बनिये ने कहा।

"कहो, क्या शर्त लगाते हो?"—काश्तकार ने कहा।

अगर ग़रीब काश्तकार ज़मीन्दार के घर दावत खा आया तो बनिया उसे एक जोड़ी बैल की खरीदकर देगा और अगर वह ज़मीन्दार के घर दावत न खा सका, तो काश्तकार को उसकी ज़मीन मुफ़्त तीन साल जोतनी होगी!! यह शर्त रखी गयी; बाकी काश्तकार इसके लिए गवाही थे।

ग़रीब काश्तकार ने, सीधे ज़मीन्दार के घर जाकर पूछा—"हुज़ूर! मैं आपसे एकान्त में एक बात पूछना चाहता हूँ। अंडे के बराबर सोने का दाम क्या होगा?"

"बैठो, बैठो! भोजन के बाद फ़ुरसत से इस बारे में बातचीत करेंगे।"—ज़मीन्दार ने कहा। ज़मीन्दार ने अपने साथ काश्तकार के लिए भी भोजन परोसवाया; दोनों ने भोजन किया।

"दिखाओ, कहाँ है, तुम्हारा सोना? मैं तुम्हें धोखा नहीं दूँगा।"—ज़मीन्दार ने कहा।

"मेरे पास सोना कहाँ है? मैं तो सिर्फ़ यह जानना चाहता था कि अंडे जितने सोने की क्या कीमत होगी? बस....!"—काश्तकार ने कहा।

"चल बे हट, बेवक़ूफ़ कहीं के!"—ज़मीन्दार ने झुंझलाते हुए कहा।

"दावत देनेवाले आप, और एक जोड़ी बैल खरीदनेवाला बनिया जब तक हैं, मैं भला क्यों बेवक़ूफ़ होऊँगा?"—कहता कहता काश्तकार घर चला गया।

* प्रायश्चित्त *

किसी ज़माने में कैरो में एक जौहरी रहा करता था। उसकी उम्र बीस के करीब थी। उसकी दुकान में अक्सर स्त्रियाँ आया करतीं। कहीं ऐसा न हो कि वह उनके चक्कर में पड़ जाय, वह उनकी तरफ़ नज़र उठाकर देखता तक न था। उसके व्यवाहार की हर कोई प्रशंसा किया करता।

एक दिन उसकी दुकान में एक नीग्रो ग़ुलाम लड़की ने आकर पूछा—"क्या फ़लाने की दुकान यही है? क्या आप ही दुकानदार हैं?" उसके हाँ कहने पर, उस लड़की ने इधर उधर देखते हुए उसके हाथ में एक चिट्ठी रख दी।

जब चिट्ठी खोल कर दुकानदार ने पढ़ी, तो उसे अचरज हुआ और गुस्सा भी आया। उस चिट्ठी में एक प्रेम-गीत लिखा हुआ था, और लिखनेवाली का नाम भी उसमें था।

जौहरी ने झट चिट्ठी फाड़ दी। नीग्रो लड़की को, जो जवाब की इन्तज़ार कर रही थी, बुरी तरह डाँट-फटकार कर दुकान से बाहर कर दिया। यह देखकर लोगों ने कहा—"कितना अच्छा आदमी है!"

दो तीन साल गुज़र गये। अब अच्छी लड़की मिलने पर जौहरी को शादी कर लेने की इच्छा हुई। वह दुकान में आने जानेवाली स्त्रियों को भी देखने लगा, ताकि कोई सुन्दर, बुद्धिमती स्त्री मिल सके।

एक दिन उसकी दुकान में पांच-छः गोरी ग़ुलाम स्त्रियों को लेकर एक सुन्दर युवती आई। "क्यों! कोई अच्छे जवाहरात हैं क्या?"—उसने पूछा। जब दुकानदार ने सिर हिलाया तो उसने उसको सोने के पाजेब दिखाने के लिये कहा। एक ग़ुलाम स्त्री ने उसका घाघरा ऊपर कर उसके पैर

श्रीमती रज़िया रेहाना

दिखाये। उसके छोटे-से पैर देखकर दुकानदार हैरान रह गया। उसने कहा—"मेरे पास का सबसे छोटा पाजेब भी आप के लिये ढीला होगा।"

"यह क्या कहते हो! लोग कहते हैं कि मेरे पाँव हाथी के पाँव जैसे हैं।"—युवती ने आश्चर्य से कहा।

"कौन कहता है! लगे कीड़े उसको।" दुकानदार ने उस पर मुग्ध होते हुये कहा।

"ख़ैर, हाथ के लिये चूड़ियाँ हैं क्या?"—उस नवयुवती ने पूछा। जब ग़ुलाम स्त्री ने उसके हाथ का कपड़ा हटाया तो दुकानदार की हैरानी का ठिकाना न था।

"सबसे छोटी चूड़ी भी आपके हाथ में ढीली पड़ेगी।"—उसने कहा।

"लोग तो कहते हैं कि मेरे हाथ हाथी की सूँड़ की तरह हैं, और अँगुलियाँ केलों की तरह।"—युवती ने कहा।

"हो सत्यनाश कहनेवालों का। आप जैसी खूबसूरत स्त्री इन तीनों लोकों में ही नहीं है। क्या मुझसे शादी कर आप मुझे धन्य न करेंगी!" कहता कहता दुकानदार घुटने के बल बैठ गया, और गिड़गिड़ाते हुए कुछ कहने लगा।

उस स्त्री ने मुस्कराकर कहा—"मेरे पिता मुझसे बहुत नाराज हैं। कहते हैं कि मेरे छोटे छोटे बाल हैं, शक्ल भी ख़राब; टेढ़े-मेढ़े दाँत, चेहरे पर चेचक के दाग़, मुझसे कोई शादी न करेगा। और अब तुम्हें यह कहता सुन कि मैं बहुत खूबसूरत हूँ, मुझे तो बहुत ही खुशी होती है।"

"आपके पिता का नाम क्या है, बताइये तो! मैं उनके पास जाकर शपथ खाऊँगा कि मैं आप से शादी करना चाहता हूँ।"—दुकानदार ने उससे कहा। "उनका नाम शेख आल इस्लाम है।

अगर तुम यह कहोगे कि तुम मुझ से शादी करना चाहते हो, तो वे तुरंत मानेंगे नहीं। मेरी बेअदबी और बदसूरती की बातें सुनाकर वे तुम्हें डरा देंगे। तुम सब के लिये "हाँ हाँ" कहते जाना। कहना, कुछ भी हो, तुम मुझ से ही, शादी करोगे।"—उस युवती ने युवती से कहा।

"मैं उनसे कब मिल सकता हूँ?"—दुकानदार ने युवती से पूछा।

"कल दस बजे।" यह कह युवती, अपनी गुलाम स्त्रियों के साथ चली गई।

अगले दिन सवेरे दुकानदार शेख आल इस्लाम का घर ढूँढ कर उसे देखने गया। आल इस्लाम ने दुकानदार की बात सुन कर कहा—"तुम शायद मेरी लड़की के बारे में नहीं जानते हो! वह बहुत बद-किस्मतवाली है। भूत-सी है। दिन में देखो तो रात में बुरे ख़्वाब आयें।"—उसने अपनी लड़की की बुराई बहुत देर तक की। जो कुछ भी वह कहता गया, दुकानदार भी "हाँ हाँ" कहता गया।

आल इस्लाम भी क्या करता! आख़िर वह दुकानदार से अपनी लड़की का ब्याह करने के लिये राज़ी हो गया। दुकानदार

से उसने इस बारे में दस्तावेज़ लिखा लिये। गवाहों के दस्तख़त भी करवा लिये। दस्तावेज़ में लिखा गया था कि दुल्हा लड़की को उसकी कमियों के बावजूद भी, अपनी स्त्री बनाना क़बूल करता है, और अगर उसने कभी तलाक दिया तो उसको २० हज़ार दीनारें हरज़ाने के तौर पर देनी होंगी।

"लड़की बीमार रहती है। चारपाई से उतर नहीं सकती। इसलिये शादी यहीं होनी चाहिये।" आल इस्लाम ने कहा। जौहरी इसके लिये भी राज़ी हो गया।

विवाह हो गया। दुकानदार पत्नी के कमरे में गया और घूँघट हटाकर पत्नी को देखते ही, उसका कलेजा थम गया। दुल्हिन एक दम बदसूरत थी। वह लड़की तो कतई न थी, जो दुकान में जवाहारात खरीदने आई थी।

दुकानदार निराश हो घर वापिस चला आया। अगले दिन जब वह ग़मग़ीन, दुकान में बैठा था तो वह युवती फिर अपने गुलामों के साथ आई। उसने आते ही कहा—"शादी मुबारक हो!"

दुकानदार उसे बुरा-भला कहने लगा। तब उसने आश्चर्य करते हुये कहा—"क्या तुम्हें मेरी भेजी हुई चिट्ठी याद नहीं है? क्या तुम नीग्रो गुलाम लड़की को भूल गये हो!" जब वह जाने को थी कि दुकानदार ने उसके पैर पकड़कर कहा—"माफ़ करो, मुझे अक़्ल आ गई है। मुझे जैसे-तैसे इस दोज़ख़ से बाहर हटाओ।"

दुकानदार को देखकर तरस आ गई। वह उसको एक उपाय बताकर चली गई। उसके कथनानुसार सीधे ससुर के घर गया। जब ससुर और दामाद आराम से बरामदे में बैठे हुए थे, तो फ़ाटक से होहल्ला करते करते ऐरे-गैरे सब आने लगे। कई तालियाँ

बजा रहे थे, कोई डमरू बजा रहा था, कोई बन्दर को नचा रहा था तो कोई भालू को। कोई गन्दे गन्दे गीत गा रहा था। ऐसा लगता था, मानों कैरो के सब गुण्डे, बदमाश, बेईमान, लुच्चे-लफंगे, वहाँ आ गये हों।"

आल इस्लाम ने गरजकर कहा—"क्यों मचा रखा है यह शोर?" परन्तु जब तक दुकानदार ने उनको रुकने का इशारा न किया, तब तक वे न रुके।

तब दुकानदार ने आल इस्लाम की ओर मुड़कर कहा—"ये सब मेरे रिश्तेदार हैं। मेरी शादी की खुशियाँ मनाने आये हैं।"

आल इस्लाम को काटो तो खून नहीं। "ये सब क्या तेरे रिश्तेदार हैं? अगर पहिले मालूम होता तो मैं अपनी लड़की तुझे देता ही नहीं।"—उसने कहा।

"अगर तुम मुझ से पूछते तो मैं पहिले ही बता देता।"—दुकानदार ने कहा।

"बिना पूछे भी बताना चाहिये था। तेरा लिखा हुआ दस्तावेज़ अब नहीं चलेगा।"—आल इस्लाम ने कहा।

"मौत आ जाये; पर मैं अपनी पत्नी को न छोड़ूँगा। देखता हूँ, आप क्या करते हैं!"—दुकानदार ने धमकी दी।

यह सुनकर आल इस्लाम ज़रा नरम पड़ा। "बाबू! हमारी इज़्ज़त बचा। खुदा तेरा भला करेगा। मेरी लड़की को तलाक़ दे दे। मेहरबानी कर।"—उसने कहा।

दुकानदार ने तलाक़ इस तरह लिखकर दिया जैसे लिखते हुए उसे बड़ी तकलीफ़ हो रही हो, उससे जबर्दस्ती लिखाया जा रहा हो। बाद में उसने उस सुन्दर स्त्री से विवाह किया, जिसे वह प्रेम करने लगा था। जब उसे यह मालूम हुआ कि वह कैरो सुल्तान के खानदान की है, तो उसकी खुशी का ठिकाना ही न रहा।
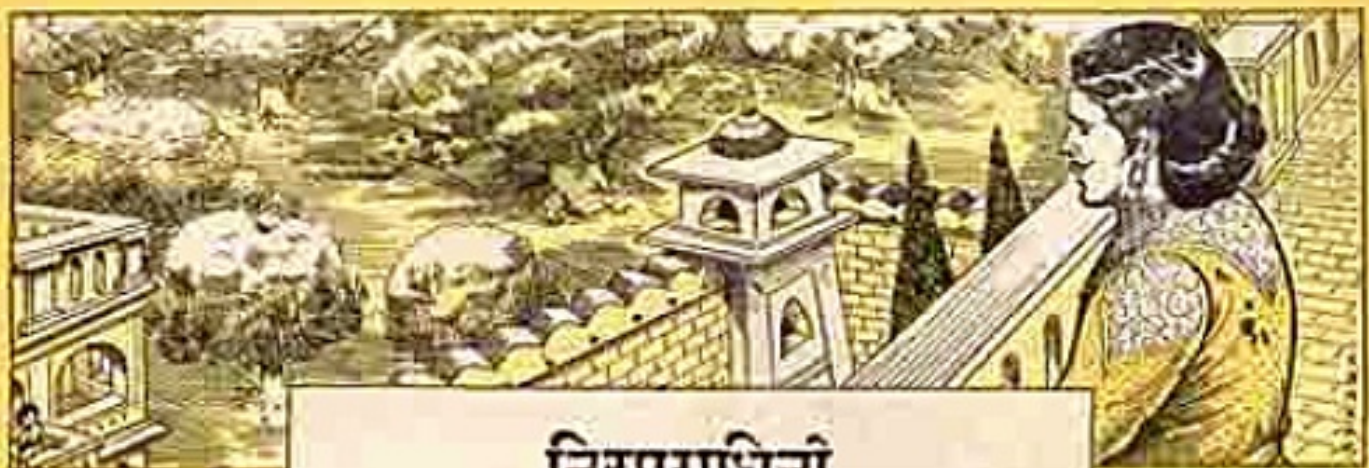
निरपराधिनी

अवन्तीनगर का एक राजा हुआ करता था। एक दिन, शाम को जब वह अपने महल की छत पर टहल रहा था, तो पासवाले मकान में उसको एक सुन्दर स्त्री दिखाई दी। राजा समझदार और संयमी था। परंतु उस स्त्री का सौंदर्य देखते ही, वह उसकी ओर अकर्षित हुआ! उसका मन विचलित हो गया।

उसने तुरंत नौकर को बुलाकर पूछा कि वह मकान किसका है।

"जी हुज़ूर! वह मकान आपके नौकर वीरभद्र का है।" सिर नवाकर नौकर ने उत्तर दिया।

"जाओ, वीरभद्र को एक बार मेरे यहाँ बुलाओ।"—राजा ने हुकुम दिया।

वीरभद्र के आते ही राजा ने उसके हाथ में एक चिट्ठी देते हुये कहा—"देखो इसको ले जाकर फ़लाने शहर में, फ़लाने आदमी को देकर, उससे जवाब लाना है। तुम यहाँ से कल सवेरे ही चले जाओ।"

"जो आज्ञा महाराज!" कहकर वीरभद्र चिट्ठी लेकर अपने घर चला गया। और जाने की तैयारियाँ करने लगा।

अगले दिन सवेरे वीरभद्र के घर छोड़ कर चले जाने के बाद, घूमता-घामता राजा अकेला उसके घर में गया।

वीरभद्र की पत्नी ने राजा का उचित आदर-सत्कार किया। उसके बाद उसने कहा—"आप हमारे मालिक हैं, परंतु भगवान ही हमारे रक्षक हैं।"

"तुम क्यों इस तरह यह बात कह रही हो?"—राजा ने पूछा।

"आप इस प्रकार क्यों आये हैं, मैं यह जानती हूँ। पर मैं एक बात जानना चाहती

श्री रामानन्द पचौरी

हूँ—अच्छे अच्छे पकवानो के खानेवाले उच्छिष्ट के लिए क्यों ललचाते हैं!"—सिर झुकाये हुए वीरभद्र की पत्नी ने सविनय पूछा।

यह सुनते ही राजा का मुँह नीचा हो गया। वह शर्मिन्दा हुआ। वह झट उठा, उसे जूते का भी ख्याल न रहा। उन्हें वहाँ छोड़ वह महल वापिस चला गया।

वीरभद्र को थोड़ी दूर जाने के बाद मालूम हुआ कि वह राजा की चिट्ठी घर में ही भूल आया था। वह फिर वापिस गया। उसे बरामदे में राजा के जूते दिखाई दिये। वह तुरंत ताड़ गया कि राजा ने उसे क्यों दूसरी जगह चिट्ठी का बहाना बनाकर भेजा था। उसने पत्नी को देखा तक नहीं, चिट्ठी लेकर घोड़े पर सवार हो चला गया। उसको पत्नी पर पूरा सन्देह था।

जहाँ उसको जाना था, वह वहाँ गया। जिसको चिट्ठी देनी थी, उसको चिट्ठी दी। फिर उस से जवाब लाकर राजा को उसने दे दिया। राजा ने इस काम के लिए सौ मुहरों का उसे पुरस्कार दिया।

वीरभद्र सौ मुहरे लेकर जौहरी के पास गया और वहाँ जवाहरात खरीदकर, पत्नी को पहिनाने के लिये लाया। जवाहरातों को पहनने के कारण उसकी पत्नी का सौन्दर्य और भी दुगना हो गया था।

"यह राजा की कृपा से पाया हुआ इनाम है। इन्हें पहिन कर कुछ दिन के लिए अपने मायके चली जाओ।"—वीरभद्र ने कहा।

"अच्छा, तो मैं चली जाऊँगी।" यों कहकर दूसरे ही दिन वीरभद्र की पत्नी खूब सज-धजकर मायके चली गई।

वह मायके में एक महीना रही। परंतु उसको फिर लिवा लाने के लिए वीरभद्र न गया। किसी को उसने भेजा भी नहीं।

आख़िर उसने अपनी पत्नी के नाम एक चिट्ठी तक भी न लिखी।

महीना ख़तम होते ही वीरभद्र का साला उसे देखने आया। उसकी बातें सुनने के बाद साला ताड़ गया कि वह अपनी पत्नी को हमेशा के लिए छोड़ना चाहता है। मामला काफ़ी बिगड़ गया था।

"इधर उधर की इतनी बातें क्यों! तुम मेरी बहिन को अपने घर में लाकर ठीक तरह रखते हो या तुम यह चाहते हो कि मैं राजा के यहाँ इस बारे में शिकायत करूँ!"—साले ने आख़िर पूछा।

"अगर तू चाहता है कि दरबार में सब लोग यह जान लें कि तेरी बहिन को उसके पति ने छोड़ दिया है, तो जाकर शिकायत कर ले। परन्तु जो कुछ मैंने किया है, अभी तक किसी को कुछ पता नहीं। जो तेरी मर्ज़ी हो सो कर।"—वीरभद्र ने साले से कहा।

"मुझे भी मालूम है कि राजा से शिकायत कैसे करनी होगी!"—साले ने निर्भय होकर कहा। फिर राजा के यहाँ चला गया।

दूसरे दिन वीरभद्र को दरबार में हाज़िर होने का हुकुम मिला। राजा के सिंहासन के पास न्यायाधिकारी बैठा हुआ था। उसने वीरभद्र के साले को बुलाकर कहा—"तुम अपनी शिकायत पेश करो।"

साले ने इस प्रकार कहा—

"महाराज को इन्साफ़ करना पड़ेगा। हमारा एक अच्छा बाग़ हुआ करता था। उसके चारों ओर चार-दीवारी बनाकर, हमने उसको जी-जान से पाला पोसा। फलते फूलते उस बाग़ को हमने वीरभद्र को सौंप दिया और कहा कि वह उसके फलों का आनन्द ले और बाग़ की रक्षा करे। वीरभद्र ने कुछ दिनों तक बाग़ का लाभ उठाया, फिर दीवारें तोड़-ताड़कर बाग़

को उजाड़कर चला गया। अब कहता है कि वह उस बाग़ को नहीं चाहता, अगर हम चाहते हो तो हम उसे वापिस ले सकते हैं। क्या ऐसा करना ठीक है?"

"तुम क्या कहते हो वीरभद्र?"—न्यायाधिकारी ने पूछा।

वीरभद्र ने इस प्रकार जवाब दिया:

"मैंने यह काम न अपनी इच्छानुसार ही किया है, न किसी के कहने पर ही। एक दिन क्या हुआ कि जब मैं अपने बाग़ में गया तो मुझे वहाँ शेर के पंजों के निशान दिखाई दिये। मैं समझ गया कि उस बाग़ में रहना मेरे लिए खतरे से खाली नहीं है। शेर के प्रति मेरा गौरव, और अपने जीवन के प्रति मेरी इच्छा—इन दोनों ने मिलकर मुझ से यह काम करवाया है। मैं लाचार हूँ। मैं जानना चाहता हूँ कि इसमें मैंने क्या ग़ल्ती की है?"

राजा ने, जो तब तक चुप बैठा था, बीच में आते हुए कहा—"वीरभद्र! तुम्हें सन्देह होता-सा लगता है। मैं उस बाग़ के बारे में जानता हूँ। हो सकता है कि ग़ल्ती से शेर उस के अन्दर चला गया हो, पर शेर को उस बाग़ में क्या मिलता! वह शेर किसी फूल-पंखुड़ी, पत्र-फल, को छुए बिना ही, तभी उल्टे पाँव चला गया होगा। शेर का ख्याल कर, बाग़ को छोड़ देना तुम्हारे लिए बिल्कुल लाभप्रद नहीं है। जरूरत भी नहीं है।"

दरबार के सब लोग गुम-सुम बैठे थे। वीरभद्र के सिवाय इन बातों को दरबार में कोई भी न समझ सका। यह सुन वीरभद्र बहुत सन्तुष्ट हुआ। उसके दूसरे ही दिन वह पत्नी को मायके से बुला लाया और आराम से पहले की तरह गृहस्थी चलाने लगा।

अपनी ग़ल्ती कोई न जाने !

★

ब्रह्मा ने सृष्टि का कार्य समाप्त कर, समस्त प्राणियों को बुलाकर कहा—"प्राणियों ! जैसे मुझे बनाना था, वैसे मैंने तुम्हें बना दिया है। पर यह ज़रूरी नहीं है कि जैसे तुम अब हो, वैसे ही हमेशा रहो। अगर तुम्हें अपने में कोई ग़ल्ती दिखाई देती है, तो उसे सुधारने में मुझे कोई आपत्ति नहीं है। यही नहीं, अगर तुम दूसरों को गुण चाहते हो तो वे भी मैं दे सकता हूँ। एक एक करके मेरे बनाये हुये प्राणियों के बारे में विचार करते हुए आओ।"

पहिले पहल लंगूर ने सामने आकर कहा—"पिता जी! मुझे अपने में तो कोई कमी नहीं दिखाई देती। मैं अच्छा भला हूँ; पर जब मैं भालू के बाल और उसकी अजीब चाल देखता हूँ, तो मुझे रोना-सा आता है।"

तब भालू ने उठकर कहा—"मेरे बालों में क्या कमी है! हमेशा मज़े में गरमी बनी रहती है। आपने मुझे अच्छा ही बनाया है। पर हाथी को देखकर मुझे बड़ा अफ़सोस होता है। वह बिचारा बड़ा बेढंगा बना है।"

इस तरह हर प्राणी उठता, अपनी सराहना करता, और दूसरों की नुक्ताचीनी करता और यह बतलाने की कोशिश करता कि ब्रह्मा ने उनको बनाने में ग़ल्ती की है। ब्रह्मा ने आह भरी, और निराश हो सब प्राणियों को भेज दिया। उसकी ग़ल्तियाँ सुधारने की जिम्मेवारी भी जाती रही।

पराजित

अवन्ती देश में हेमचन्द्र नाम का एक कवि रहा करता था। वह बहुत रईस भी था। उसने कालिदास की प्रसिद्धि-प्रतिष्ठा के बारे में सुन रखा था। उसे यह भी मालूम था कि राजा भोज के दरबार में उसका कितना आदर-सत्कार होता था। कालिदास को हराकर, उसका स्थान हड़पने की, हेमचन्द्र को दुर्बुद्धि सूझी।

इसी उद्देश्य से, थोड़े-बहुत नौकर-चाकरों को लेकर हेमचन्द्र पालकी में धारा नगर गया और वहाँ एक धर्मशाला में रहने लगा। कालिदास को भी मालूम हो गया कि हेमचन्द्र उसको हराकर, दरबार में उसका पद छीन लेने के उद्देश्य से ही अवन्ती देश से वहाँ आया हुआ था।

यह जानने के लिए कि हेमचन्द्र कितना प्रतिभाशाली है, कालिदास कहार का वेष धारण कर उसकी पालकी ढोनेवाले कहारों में जा मिला। थोड़ी देर बाद हेमचन्द्र ने बाहर आकर कहारों को आवाज़ दी। औरों के साथ कालिदास भी सामने आया।

हेमचन्द्र के पालकी में बैठते ही कहार पालकी उठाकर चलने लगे। आगे के कहारों में से एक कालिदास था।

पालकी जा रही थी। पालकी ढोने की आदत कालिदास को तो थी नहीं, इसलिए वह कन्धा बदलता जाता। यह देखकर हेमचन्द्र ने पूछा:

"अय मांदोलिका दंडः स्कंधं किं तव बाधति?"

(पालकी के डंडे के कारण क्या तेरा कन्धा दुख रहा है?)

हेमचन्द्र के प्रश्न में व्याकरण की एक अशुद्धि थी। "बाधते" की जगह उसने

श्री रामनारायण शास्त्री

"बाधति" कहा था। यह देखकर कालिदास को गुस्सा आ गया। उसने कहा :

"न बाधते तथा मां हि यथा बाधति बाधते।"

(मुझे यह उतना नहीं दुःखा रहा, जितना कि आपका "बाधति" का प्रयोग।)

"क्या कहार भी इतना पन्डित हो सकता है!" हेमचन्द्र को आश्चर्य हुआ। उसने कालिदास से पूछा—"अरे तूने इतनी भाषा कहाँ सीखी?"

"हुजूर, मैं कालिदास की पालकी ढोया करता था। वे जो कुछ शिष्यों को बताये करते थे, उसका कुछ भाग मेरे कानों मे भी पड़ गया। नहीं तो मैं भाषा के बारे में कुछ भी नहीं जानता।"—कालिदास ने हेमचन्द्र से कहा।

"जब कालिदास का कहार ही इतना पंडित है, तो न जाने कालिदास स्वयं कितना विद्वान होगा?" यह सोच हेमचन्द्र कालिदास को खुद देखने गया। यह जानकर कि हेमचन्द्र उसके घर जा रहा है, कालिदास एक नौकर का वेष धारण कर ड्योढ़ी के पास खड़ा हो गया। हेमचन्द्र ने पूछा—"कालिदास है क्या?" तुरन्त कालिदास ने कहा :

"नखलीन खलीन लील्या
ननय सुलनय स्तवेहयं
निरगा दुरगारिरहंसा
पुर गारुत्मत गोपुरा दुसहि:"

(नये घोड़े पर चढ़ हाथ में लगाम पकड़, खींचता, ढीला करता, गरुत्मन्त के वेग से, वह नगर के दरवाज़ से बाहर चला गया है।)

"कालिदास की ड्योढ़ी का पहरेदार ही जब इतना कुशल कवि है, तो भला मैं कालिदास को क्या जीत सकूँगा?" यह सोचकर हेमचन्द्र उसी दिन अवन्ती नगर वापिस चला गया।

भोले - भाले

बहुत दिनों की बात है कि रूस में एक बुढ़िया रहा करती थी। उसके दो लड़के थे। उन में से एक मर गया था और दूसरा दूर किसी देश में था।

उसके जाने के तीन दिन बाद, बुढ़िया के घर एक सिपाही ने आकर पूछा—"नानी! आज रात अपने घर में मुझे ठहरने दोगी?"

"अच्छा, ठहर जाओ बेटा! पर तुम आ कहाँ से रहे हो?"—बुढ़िया ने पूछा।

"मैं उस लोक से चला आ रहा हूँ।"—सिपाही ने कहा।

"सचमुच! मेरा लड़का भी हाल में गुज़रा है। कहीं वह तुम्हें वहाँ दिखाई तो नहीं दिया?"—बुढ़िया ने पूछा।

"दिखाई क्यों नहीं दिया! हम दोनों एक ही कमरे में रहा करते थे। एक साथ खाते-पीते भी थे।"—सिपाही ने कहा।

"सच?" बुढ़िया को आश्चर्य हुआ।

"तुम्हारा लड़का वहाँ बगुलों को चरा रहा है।"—सिपाही ने कहा।

"अरे! वह बिचारा कितनी तकलीफ़ें झेल रहा होगा?"—बुढ़िया ने कहा।

"तकलीफ़ नहीं तो और क्या, नानी? ये बगुले बात बात में काँटों में जा घुसते हैं।"—सिपाही ने कहा।

"तब तो उसके कपड़े सब फट-फटा गये होंगे।"—बुढ़िया ने कहा।

"यक़ीन जान, उसके कपड़े सब चीथड़े चीथड़े हो गये हैं।"—सिपाही ने कहा।

"बेटा, मेरे पास चालीस गज़ का थान और कुछ रुपया है। उन्हें मेरे लड़के को दे सकोगे?"—बुढ़िया ने पूछा।

"अच्छा नानी!"—सिपाही ने कहा। रात उसने बुढ़िया के घर ही काटी। अगले

श्रीमती डी. मंजुलता

दिन थान और रुपया पैसा लेकर, वह अपने रास्ते पर चम्पत हो गया।

इस घटना के थोड़े दिनों बाद दूर देश से बुढ़िया का लड़का वापिस आ गया।

"बेटा! जब तू गया हुआ था, उस लोक से एक आदमी आया। गुज़रे हुये तेरे भाई के बारे में उसने बहुत कुछ बताया। वे एक ही कमरे में रहते हैं। भाई के लिये एक थान कपड़ा, और थोड़ा रुपया-पैसा उसके हाथ मैंने भेज दिये हैं।"—बुढ़िया ने अपने दूसरे लड़के से कहा।

"बड़ी अक़्लमंदी का काम किया! तेरी आँखों में कोई धूल झोंक गया है। न जाने तेरे जैसे भोले-भाले इस दुनियाँ में कितने हैं। उन पर अक़्लमन्दी दिखाकर मैं अपना उल्लू सीधा करूँगा।" कहता कहता बुढ़िया का लड़का घर से निकल गया।

जाते जाते एक गाँव पड़ा। उस गाँव के ज़मीन्दार के घर के पास एक सूअरी और उसके बच्चे कुछ खा रहे थे। बुढ़िया के लड़के ने, सूअरी के सामने साष्टांग नमस्कार किया।

यह सब घर की खिड़की में से ज़मीन्दार की पत्नी देख रही थी। उसने दासी को बुलाकर कहा—"जाकर पता लगाओ, क्यों, वह किसान इस प्रकार साष्टांग नमस्कार कर रहा है" दासी ने आकर बुढ़िया के लड़के से पूछा—"हमारे सूअरी के सामने क्यों यों साष्टांग नमस्कार कर रहे हो?"
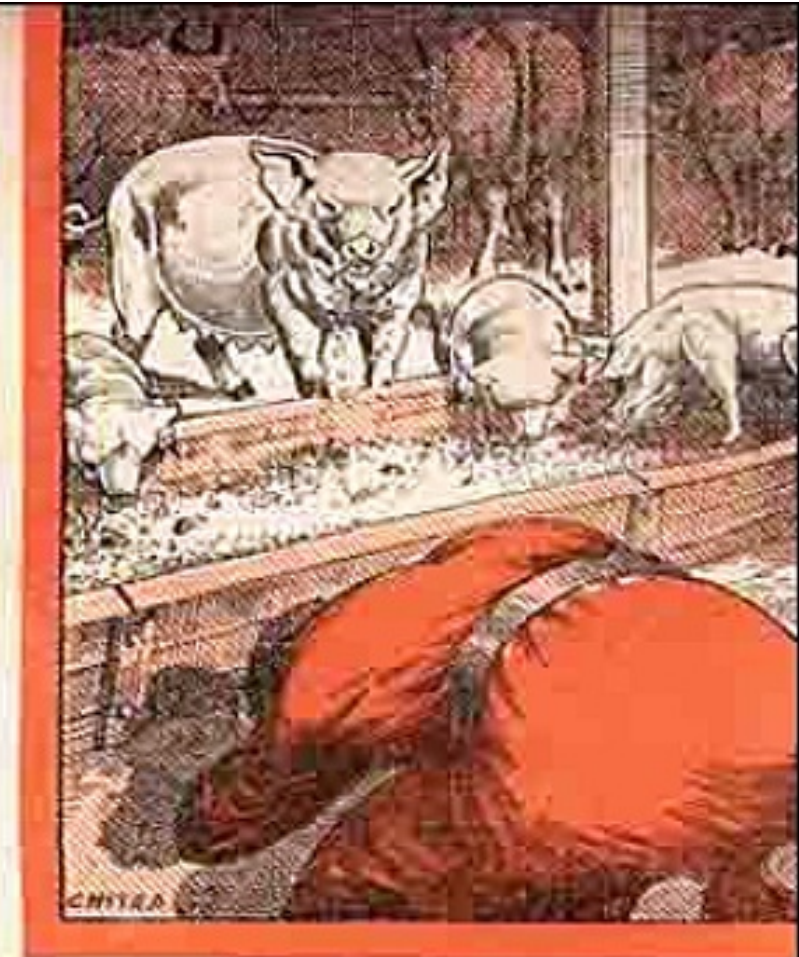
"भाई! यह सूअरी मेरी पत्नी की सम्बन्धी है। कल मेरे लड़के का विवाह है। विवाह करवाने के लिये सूअरी को, और दुल्हिन का साथ देने के लिये सूअरी के बच्चों को, तुम्हारी मालकिन भेजने की इजाज़त दे सकेंगी?"—बुढ़िया के लड़के ने कहा।

दासी की बात सुनकर ज़मीन्दार की पत्नी ने दासी से कहा—"शादी के लिये

सूअरों को बुलाने आया है! कितना बेवकूफ है! ख़ैर, हमें क्या! उसे देखकर दुनियाँ हँसेगी। उस सूअरी को मेरा, ऊनी कोट पहिना कर, बच्चों के साथ, घोड़ा-गाड़ी में बिठाकर धूम-धाम से भिजवाओ।"

सूअरी और उसके बच्चों को गाड़ी में बिठा, बुढ़िया का लड़का घर की ओर चला।

जब शिकार खेलकर ज़मीन्दार घर वापिस आया तो उसकी पत्नी ने अट्टहास करते हुए कहा—"हँसते हँसते पेट में बल पड़ गये। यहाँ एक किसान आकर हमारी सूअरी के सामने साष्टांग नमस्कार करने लगा। उसने कहा कि सूअरी उसकी पत्नी की सगी सम्बन्धिन थी। उसने प्रार्थना की कि सूअरी और और उसके बच्चों को दुल्हिन का साथ देने के लिये भेजा जाय।"

"तब क्या था, तूने भेज दिया होगा! ठीक है न!"—ज़मीन्दार ने कहा।

"हाँ! सूअरी को अपना ऊनी कोट पहिनाकर, बच्चों के साथ घोड़ा-गाड़ी में बिठाकर भेज दिया है।"—पत्नी ने कहा।

"तू ही बेवकूफ है, वह नहीं है!"—कहकर ज़मीन्दार अपने घोड़े पर सवार होकर बुढ़िया के लड़के का पीछा करता

करता निकल गया। बुढ़िया का लड़का ताड़ गया कि कोई उसका पीछा कर रहा है। उसने गाड़ी झट घने जंगल में हांक दी और सड़क पर टोपी ज़मीन पर रखकर बैठ गया।

ज़मीन्दार भी जल्दी जल्दी वहाँ आ पहुँचा—"ऐ! किसी किसान को घोड़ा गाड़ी में सूअरी और उसके बच्चों को भगा कर ले जाते हुए इस तरफ़ देखा है?"—उसने बुढ़िया के लड़के से पूछा।

"देखा ज़रूर है, हुज़ूर! पर उसको इधर से गये हुए तो बहुत देर हो गयी है!"—बुढ़िया के लड़के ने कहा।

"उसे पकड़ना है; किस तरफ़ गया है?"—ज़मीन्दार ने पूछा।

"क्या आप इस इलाके की पगडण्डियाँ जानते हैं?"—बुढ़िया के लड़के ने पूछा।
"क्या तुम खुद जाकर उसे पकड़ सकोगे?"—ज़मीन्दार ने पूछा।

"मैं! मेरी टोपी के नीचे एक बटेर है। मैं उसकी रखवाली कर रहा हूँ।"—बुढ़िया के लड़के ने कहा।

"तुम्हारी बटेर मैं देखता रहूँगा।"—ज़मीन्दार ने कहा। "वह चली गयी तो मालिक मेरी जान ले लेगा।"—उसने कहा।

"कितने की है यह बटेर!"— ज़मीन्दार ने पूछा।

"तीन सौ से कम न होगी।"— बुढ़िया के लड़के ने कहा।

"अगर वह चली भी गयी तो मैं उसका दाम दे दूँगा।"—ज़मीन्दार ने कहा।

"बातों का क्या ठिकाना! जितनी मर्ज़ी उतनी बनायी जा सकती हैं!"— बुढ़िया के लड़के ने कहा।

"अच्छा! तो तुझे यकीन न हो तो यह ले तीन सौ रूबेल!"—ज़मीन्दार ने बुढ़िया के लड़के से कहा।

बुढ़िया के लड़के ने तीन सौ रूबेल ले लिये, और ज़मीन्दार के घोड़े पर चढ़, पेड़ों के पीछे छुपायी घोड़ा-गाड़ी लेकर वहाँ से नौ दो ग्यारह हो गया।

ज़मीन्दार घंटों इन्तज़ार करता रहा। पर वह न आया। अन्धेरा होने को था।

"देखें तो सचमुच इस टोपी के नीचे बटेर है कि नहीं! अगर है तो वह वापिस ज़रूर आयेगा। अगर नहीं है तो उसकी प्रतीक्षा करना व्यर्थ है!" ज़मीन्दार ने टोपी उठाई। उसके नीचे कुछ भी न था।

"यह बदमाश चोर था। यह हो न हो, वह ही होगा, जिसने मेरी पत्नी को धोखा दिया है।"—सोचता सोचता ज़मीन्दार घर वापिस चला गया।

बुढ़िया के लड़के ने, ज़मीन्दार के घोड़े, गाड़ी, सूअरी, रुपया-पैसा सब कुछ घर ले जाकर अपनी माँ को दिखाया। उसने अपनी माँ से कहा—"देखो माँ! इस दुनियाँ में कई तुम से भी अधिक भोले-भाले हैं! अगर ऐसे लोग न होते तो आज मुझे इतनी सम्पत्ति नहीं मिलती।"

वे दोनों बड़े आराम से अपने दिन काटने लगे।

मांस क्या हुआ ?

एक बार, गोहा बाज़ार जाकर बीस भर मांस लाया। उसने मांस पत्नी को देते हुए कहा—"मैं काम पर ज़रा बाहर जा रहा हूँ। ठीक भोजन के समय वापिस आ जाऊँगा। उस बीच में तुम इस मांस का कबाब तैयार करो।"

गोहा के कथनानुसार उसकी पत्नी ने कबाब तैयार कर दिया। अभी भोजन का समय होने में काफ़ी देरी थी। इसलिये उसने कबाब का स्वाद दिखाने के लिये भाई को बुलवा भेजा। दोनों ने मिलकर सारा कबाब खा लिया।

ठीक भोजन के समय गोहा भोजन के लिये आ बैठा। उसने कबाब के परोसे जाने की इन्तज़ारी की; पर उसको परोसा न जाता देख, उसने पत्नी से पूछा—"कबाब बनाने के लिये कहा था न! क्यों नहीं बनाया?"

"बनाने की सोच ही रही थी कि बिल्ली इस बीच में सारा मांस ले गई। मैं क्या करती?"—गोहा की पत्नी ने कहा।

झट गोहा खाता खाता उठ खड़ा हुआ, और उसने तराज़ू लेकर बिल्ली को तोला। बिल्ली ठीक बीस भर निकली।

"अरे पगली! अगर यही मांस है तो बिल्ली कहाँ है?"—उसने पत्नी से पूछा।

व्यर्थ सेवा

एक ज़मीन्दार ने बहुत हिचक-झिझक के बाद, बहुत-सा रुपया लगाकर एक बढ़िया अरबी घोड़ा खरीदा। ज़मीन्दार उसको देखकर फूला न समाता था, उसे और कुछ सूझता ही नहीं था। घोड़े के लिये ज़मीन्दार ने महल-सा अस्तबल भी बनवाया। उसे डर था कि साईस उसकी ठीक तरह से मालिश करेगा कि नहीं, इसलिये वह स्वयं दिन में दो बार उसकी मालिश किया करता।

ज़मीन्दार घोड़े को जी-जान से देख रहा था, फिर भी घोड़ा दिन प्रति-दिन कमज़ोर होता गया। उसका चिकना चिकना चमड़ा सूख-सा गया। हड्डियाँ बाहर निकल आयीं।

आखिर, ज़मीन्दार ने अपने घोड़े से कहा—"मैं इतने लाग-लगाव से खुद तेरी परवरिश कर रहा हूँ। मैं स्वयं तेरी मालिश भी करता हूँ। फिर क्यों तू इस तरह कांटा हो रहा है, जैसे कोई खाने-पिलानेवाला ही न हो।"

इस प्रश्न का उत्तर दबी ज़बान में घोड़े ने यों दिया—

"मुझे इतने बड़े महल में रख, आपके स्वयं मालिश करने से मेरा क्या फ़ायदा होता है? आपने मेरे पेट की परवाह ही न की? न मुझे मालिश चाहिये, न कुछ और ही। मुझे वक्त पर थोड़ा खाना दीजिये, बस, वही मेरे लिए बहुत कुछ है। मैं फिर हट्टा-कट्टा हो जाऊँगा।" यह सुन ज़मीन्दार बहुत शर्मिन्दा हुआ।

गदहे की शिक्षा !

कोई सज्जन कहीं से आये। वे हर किसी से कहते-फिरते कि वे बड़े विद्वान हैं, और मूर्ख से मूर्ख आदमी को भी पढ़ा-लिखा सकते हैं।

कानों कान यह बात राजा के पास भी पहुँची। उसने उस विद्वान को दरबार में बुलाकर पूछा—"क्यों भाई ! सुना है, तुम मूर्खातिमूर्ख को भी पढ़ा-लिखा सकते हो; क्या यह सच है ?"

"जी महाराज ! अगर पैसे देनेवाला कोई दाता हो, तो दस वर्ष में गदहे को भी वेद-मन्त्र सिखा दूँ।"

"हमारे यहाँ एक गदहा है; उसको सिखाने के लिए क्या लोगे ?"—राजा ने पूछा।

"दस वर्ष की अवधि दीजिए और हर महीने हज़ार मुहरें दिलवाइये !"—विद्वान ने नत मस्तक होकर कहा।

"अगर दस साल बाद गदहे ने वेद नहीं सुनाये तो तुम्हारा सिर कटवा दूँगा !"—राजा ने कहा।

"बेशक कटवा दीजिए !"—विद्वान ने कहा। राजा ने उसको एक हज़ार मुहरों के महावार वेतन पर, गदहे का शिक्षक नियुक्त कर दिया।

यह देख एक मित्र ने विद्वान से पूछा—"यह क्या किया ? क्या तू सौ वर्षों में गदहे से वेद-पाठ करा सकेगा ? तूने अपनी जिन्दगी, लगता है, दस वर्ष तक ही सीमित कर ली है। क्यों ?"

"यह क्यों सोचते हो कि दस वर्ष में मैं ही मरूँगा ? इस बीच में राजा मर सकता है, नहीं तो गदहा मर सकता है; क्यों....?" विद्वान ने कहा।

मूर्ख बुढ़िया

एक सिपाही घर जा रहा था। चलते चलते उसके पैर थकी हो गये थे। भूख भी जोर से लग रही थी। एक गाँव में पहुँचकर, किसी घर का किवाड़ खटखटाया। एक बुढ़िया ने किवाड़ खोला।

"नानी! भूख के मारे मरा जा रहा हूँ। थोड़ी-सी मांड़ दे दो!"—

बुढ़िया बड़ी कंजूस थी। "बेटा! मैं कल से भूखी मर रही हूँ।"—वह सरासर झूठ बोली। इस बीच में सिपाही की नज़र, एक कोने में रखी, बिना मूठे की कुल्हाड़ी पर पड़ी।

"कुल्हाड़ी भी होती तो कुछ बनाया जा सकता था।"—

"कुल्हाड़ी! मैंने तो कभी सुना नहीं!"—बुढ़िया ने कहा।

"अच्छा! एक हँड़िया दो; अभी दिखाये देता हूँ।"—सिपाही ने कहा। उसने कुल्हाड़ी को धोकर हँड़िया में रखा, और उस में पानी डालकर चूल्हे में आग जला दी और थोड़ी देर बाद उसने उसको चखा। "अगर थोड़ा नमक होता तो अच्छा होता।"—उसने कहा।

"ठहर, मैं दिये देती हूँ।"—बुढ़िया ने नमक लाकर दे दिया।

सिपाही ने नमक हँड़िया में डाल दिया। फिर उसने कहा—"अब कुछ नहीं चाहिए, सिवाय मुट्ठी भर चावल के!"

"मैं लाये देती हूँ, ठहर!"—बुढ़िया ने चावल लाकर दे दिये। सिपाही ने चावल हँड़िया में डालकर माँड़ तैयार की। फिर माँड़ का स्वाद चखकर उसने कहा—"अगर इसमें थोड़ा मक्खन पड़ जाये तो कहने ही क्या!"

बुढ़िया ने मक्खन भी लाकर दे दिया। सिपाही ने उसको माँड़ में डाल दिया। चूल्हे पर से हँड़िया उतार उसने पूछा—"अब स्वाद न देखोगी!"

बुढ़िया ने स्वाद चखकर कहा—"क्या बढ़िया है! मुझे नहीं मालूम था कि कुल्हाड़ी की माँड़ इतनी अच्छी होती है!"

सिपाही मन ही मन बुढ़िया की नादानी पर बहुत हँसा और चला गया।

लोभ बुरा है

★

एक भेड़िये ने एक लोमड़ी से दोस्ती कर ली। दोस्ती दोस्ती में वह उस पर धौंस भी जमाने लगा। क्योंकि भेड़िया ताकतवर था। लोमड़ी को झुकना ही पड़ा।

जब कभी भेड़िये को खाने को न मिलता तो वह लोमड़ी को डराया करता—"मुझे खाना दिलाता है कि या मैं तुझे ही खा जाऊँ।" क्योंकि लोमड़ी चतुर थी, वह जहाँ तहाँ, जैसे तैसे उसको खाना दिला दिया करती थी।

एक दिन भेड़िये ने लोमड़ी से कहा—"मैं भूख के मारे मरा जा रहा हूँ। खाना दिलाता है या मैं तुझे ही मारकर खा जाऊँ!"

"हुजूर—जल्दबाज़ी न दिखाइये। आज ही एक धोबी ने बकरी काटी है और सारा मांस एक हांड़े में रख दिया है। अन्धेरा होते ही हम जाकर खा सकते हैं।"—लोमड़ी ने कहा।

अन्धेरा होने के बाद भेड़िया और लोमड़ी मिलकर धोबी के घर गये। उसके घर के दीवार में एक छोटा छेद था। दोनों उसमें से अन्दर घुस गये।

घड़े में मांस था। लोमड़ी ने थोड़ा खाकर कहा—"आइये, अब हम चलें।" पर भेड़िये ने एक न सुनी—"मिला भोजन क्यों छोड़ा जाय? जबतक मैं पेट भर न खा लूँगा, मैं नहीं आऊँगा।"—उसने कहा। आहट सुनकर धोबी आया। लोमड़ी दीवार के छेद में से बाहर भाग गई। परन्तु भेड़िया छेद में ही फँस गया। खूब खा-पीकर वह फूल गया था। धोबी ने उसको लट्ठ से इतना पीटा कि वह मर गया।

जादू के प्रयोग

प्रोफेसर पी. सी. सरकार

कुछ दिन पहिले, बालीगंज में, जो बंगाल प्रान्त में है, अखिल भारत जादूगर संघ की एक बैठक हुई। वहाँ सभासदों ने मुझे से प्रार्थना की कि मैं कोई जादू करके दिखाऊँ। तब मैंने यह जादू करके दिखाया :

एक नई चवन्नी, तीन ताश के पत्तो को लेकर मैंने जादू शुरू किया। पहिले पहले मेज़ पर नई चवन्नी रखी, और उस पर एक मामूली ताश का पत्ता रखा। मान लो, उसको नम्बर एक की जगह रखा, दो, तीन नम्बरवाली जगह पर ताश के पत्तों को उलट कर रखा। तब अगर कोई पूछे कि चवन्नी कहाँ है, तो तुरंत बेझिझक कह दो, पहिले नम्बर के ताश के पत्ते के नीचे है। ताश का पत्ता उठाकर दिखाओगे तो चवन्नी वहीं होगी। तभी दूसरे और तीसरे नम्बर के ताश के पत्तों को थोड़ा उठाकर दिखाओ ताकि लोग जान जायें कि उनके नीचे कुछ नहीं है; तब जादूगर, जादू की डंडी से पहिले नम्बर के ताश के नीचे से चवन्नी गायब कर देता है। उस ताश के पत्ते को उठाकर दिखाने से वहाँ चवन्नी न होगी। वह दूसरे नम्बर के ताश के पत्ते के नीचे चली गई होगी। उसी तरह बाद में, उसको तीसरे नम्बर के ताश के नीचे पा प्रेक्षक अचरज करेंगे। वस्तुतः तीनों में से किसी भी ताश के नीचे चवन्नी दिखाई जा सकती है। यह देख लोग और आश्चर्य करेंगे। परन्तु वे यह न जान पायेंगे कि चवन्नी एक ताश के पत्ते

के नीचे से दूसरे पत्ते के नीचे कैसी चली गई। सच पूछा जाय तो यह कर दिखाना बड़ा आसान है। इसके लिये तीन एक ही तरह के ताश के पत्ते, तीन एक ही तरह की चवन्नी लेनी चाहिये। साथ के चित्र में जैसे दिखाया गया है, जादूगर को अपने हाथ में एक अच्छा चुम्बक छुपाकर रखना चाहिये। उसी को ही "हस्त लाघव" कहा जाता है। हर जादूगर के लिये यह हस्त लाघव" एक आदत-सी हो जाती है। अगर चुम्बक ताश के पत्ते को दिखाया गया तो चवन्नी पत्ते से चिपक जायेगी और प्रेक्षकों को साधारणतः दिखायी नहीं देगी। अगर चुम्बक थोड़ा दूर रखा गया तो चवन्नी पत्ते से चिपकेगी नहीं। तब चवन्नी अलग ही रह जायेगी। इस चुम्बक को होशियारी से रखने में ही इस जादू का भेद है। इस जादू को नयी चवन्नी से ही करना चाहिये। क्योंकि पुरानी चवन्नी को चुम्बक आकर्षित नहीं कर पाता।

अच्छा होगा, अगर तीनों चवन्नियाँ, एक ही तरह की हों, एक ही वर्ष
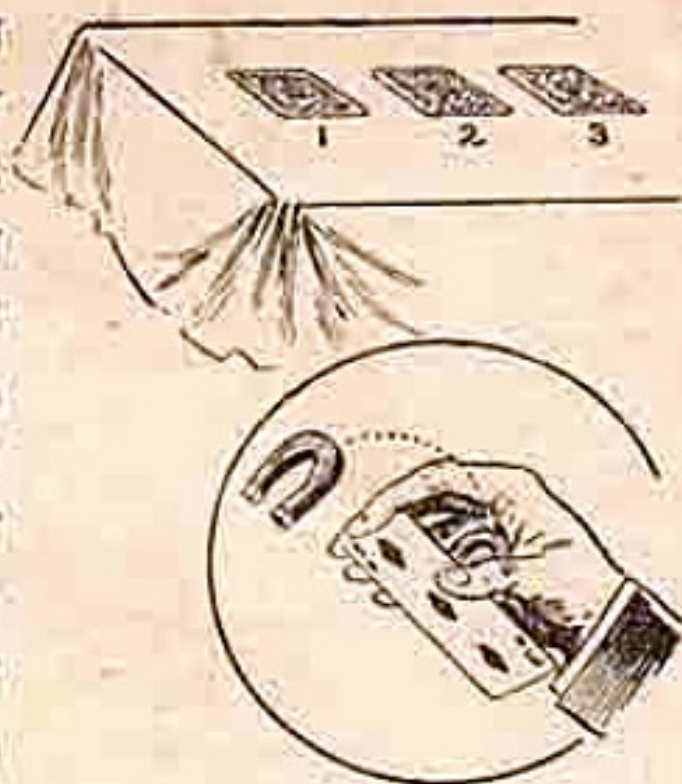
में बनी हुई हों, और एक ही तरह चमकती हों। नहीं तो, जब यह देखा जायेगा कि चवन्नी कैसे एक पत्ते के नीचे से दूसरे पत्ते के नीचे पहुँच गई, तो हो सकता है कि जादूगर पकड़ा जाये। यह बहुत सरल जादू है। अगर यह उन लोगों के सामने दिखाया गया, जो इसका गुर नहीं जानते तो बड़ा मज़ा आता है।

[जो इस सम्बन्ध में प्रोफ़ेसर साहब से पत्र-व्यवहार करना चाहें, वे उनको 'चन्दामामा' का उल्लेख करते हुए, अंग्रेज़ी में लिखें।

प्रोफ़ेसर पी. सी. सरकार,
मेजीशियन,
पोस्ट बाक्स नं ७८८८, कलकत्ता-१२.

आदिम जन्तु

मछली ही प्रथम रीढ़ की हड्डीवाली प्राणी है। मत्स्य युग में इनका खूब प्रभाव रहा। इनमें से कई के नथने भी थे, और पानी से ऊपर निकल कर वे साँस लिया करते थे। मत्स्य युग के समाप्त होते होते, भूमि पर भी कुछ प्राणी पैदा हो गये। इनमें, बिच्छू, मकड़ी, और कई प्रकार के कीड़े मकोड़े उल्लेखनीय हैं।

पहिले पहल भूमि पर जिन प्राणियों ने रहना शुरू किया, वे जल-जीव थे, और भूमि जीव भी! वे जल में पैदा होते, जल में ही थोड़े दिनों तक बड़े होते, और जब वे अपने माता-पिता जैसे हो जाते, तो भूमि पर रहने आ जाते।

अंडों में से, जो जन्तु, माता-पिता के सम-अंगी होकर पैदा हुये, वे सरीसृप थे। साढ़े सत्ताईस करोड़ साल पहिले सरीसृप इस पृथ्वी पर जन्मे।

सरीसृप हजारों तरह के थे। उनमें से जो भूमि पर रहते थे, उनको "डिनज़ार" कहा जाता था। उनकी ऊँचाई अट्ठारह-बीस फुट थी! उनका मुख पूरा खुलने पर, गज़ भर का होता था। मुख में बड़े बड़े दान्त होते थे। वे पूँछ की सहायता से खड़ा होकर चलते थे। सृष्टि में अभी तक इससे बढ़कर माँसाहारी नहीं पैदा हुआ।

"ट्रिसिर टोप्स" के तीन सींग थे। उसके मुँह पर ढाल-सी बनी रहती। वह वनस्पतियों पर जीवन निर्वाह करता।

"ब्रान्टजारज़ की ऊँचाई ७० फ़ीट थी। उसका वज़न क़रीब ३५ टन था। जब यह चलता होगा तो भूमि काँपती होगी। यह भी वनस्पति खाकर जीवित रहता। इसके शरीर के अनुपात में इसका मति बहुत ही कम थी।

बताओगे ?

१. राज्य पुनर्गठन आयोग के सदस्यों ने कितने राज्यों के निर्माण की सिफ़ारिश की है?

२. आयोग के कौन सदस्य हैं?

३. यू नू कौन हैं?

४. मलाया किसके अधिकार में है?

५. कावेरी नदी कहाँ है?

६. रहाइन नदी कहाँ है?

७. सबसे ऊँचा जानवर क्या है?

८. टोकियो किस देश की राजधानी है?

९. भारत में सोना कहाँ प्राप्त होता है, और वह किस प्रान्त में है?

१०. अम्बर का महल कहाँ है, और क्यों प्रसिद्ध है?

११. एशिया महाद्वीप की कितनी आबादी है?

१२. अर्जेन्टायना कहाँ है?

पिछले महीने के प्रश्नों के उत्तर :

१. उड़ीसा में।

२. कर्नूल।

३. चौधरी मोहम्मद अली।

४. महाबलिपुरं और कांजीवरं।

५. मलाया।

६. चीन का।

७. उत्तरी अफ़्रीका में, सहारा।

८. फ्रान्सीसियों का।

९. है।

१०. हेल सिलासी।

गुरु

गुरु ग्रह सूर्य से क़रीब ४८ करोड़ मील की दूरी पर है। जब यह भूमि के समीप आता है, तो यही दूरी ३७ करोड़ मील की हो जाती है, और दूर होने पर ६० करोड़ मील दूर।

* ग्रहों में यह बहुत बड़ा ग्रह है। सब ग्रह मिल मिलाकर गुरु के आधे नहीं हो पाते। इसकी मध्य-रेखा ९०,१९० मील है, और परिधि २१,६०,००० मील। इसका वज़न भूमि से ३१८ गुना अधिक है।

* गुरु ग्रह भूमि की तरह अपने चारों ओर भी घूमता है। परन्तु उसके घूमने की गति भूमि से बहुत अधिक तेज़ है। क़रीब १० घंटों में वह आत्म-परिक्रमा कर लेता है।

* गुरु ग्रह सूर्य के चारों ओर ८ मील प्रति सेकण्ड के, यानी हर रोज़ ७७१,००० मील, ४३३२ दिन १४ घंटे, २ मिनिट, हिसाब से घूमता है। यह गुरु का एक वर्ष है, अर्थात भूमि के वर्ष से १२ गुना।

* सूर्य से आनेवाली गर्मी, प्रकाश का गुरु ग्रह को, २५ वाँ हिस्सा ही मिलता है। इस कारण इस ग्रह पर बहुत सर्दी पड़ती है। इस में प्राणी जीवित नहीं रह सकते; क्योंकि इस ग्रह के वातावरण में आवश्यक अम्लजन नहीं होता।

* आकाश में गुरु बहुत प्रकाशमान लगता है। इसका कारण यह है कि गुरु भूमि से अधिक दूर नहीं है, और वह बहुत बड़ा भी है।

* अगर टेलिस्कोप से देखा जाय तो वह पीला दिखाई देता है। उसके ऊपर चमकीले धब्बे भी दिखाई देते हैं। इन धब्बों में एक लाल भी है। यह बहुत बड़ा है। उसकी लम्बाई ३० हज़ार मील दूर है, चौड़ाई सात हज़ार मील दूर। और सब धब्बे तो बदलते रहते हैं, पर यह नहीं बदलता। ये धब्बे, विशेषज्ञों का कहना है, ग्रह के वातावरण के परिवर्तन के सूचक हैं।

रंगीन चित्र-कथा : चित्र - ६

च्वांग और उसकी पत्नी ज्योति ने रात भर जागकर देवदार की लकड़ी से एक नाव तैयार की! नाव का अगला भाग बहुत नुकीला बनाया गया!

दूसरे दिन की दौड़ में च्वांग की नाव बड़ी तेज़ी से दौड़ने लगी। राजा च्वांग की नाव को अपनी नाव से टकराकर उसे डुबा देने की कोशिश करने लगा। किनारे पर खड़े लोग तालियाँ बजा रहे थे।

परन्तु राजा की नाव च्वांग की नाव के अगले भाग से, जो बहुत कड़ा था, टकराकर टुकड़े टुकड़े हो गयी। राजा नदी में डूबने ही वाला था कि उसके मंत्रियों ने दौड़कर उसे बचा लिया। तब तक वह बहुत पानी निगल चुका था।

"तुमने मेरे राज-वस्त्र खराब कर दिये"—राजा ने दाँत पीसते हुए च्वांग से कहा। "मुझे एक नयी पोशाक ला दो, जो पक्षियों के पंखों से बनायी गयी हो और उस पर नागेन्द्र, पक्षी, समुद्र और सूर्य अंकित हो। इसके लिए मैं तुम्हें तीन दिन का समय देता हूँ। वरना तुम्हारा सिर धड़ से अलग करवा दूँगा।"

तब ज्योति ने च्वांग से कागज़ काट काटकर सभी तरह के आकार-प्रकार के पक्षी बनाने के लिए कहा! जब च्वांग ने वह काम पूरा किया तो ज्योति ने उन्हें हवा में उड़ाते हुए कहा—"मेरे छोटे पक्षी! उड़ जाओ, उड़ जाओ!! पर मेरे लिए अपने कुछ पंख भी तो छोड़ जाओ।"

देखते देखते हज़ारों पक्षी आकाश में उड़ने लगे। वे अपने पंख फड़फड़ाते चारों ओर फैली हुई चांदनी की रोशनी को भी फीका करते लगते थे।

विविध रंगों के सुन्दर पंख नीचे गिरने लगे और उन्हें देखकर पति-पत्नी बहुत खुश हुये।

च्वांग और ज्योति ने मिलकर पंख कात डाले और उस से धागा निकाला। फिर उस धागे से एक अच्छा-सा कपड़ा तैयार किया।—उसके बाद....

रंगवल्ली
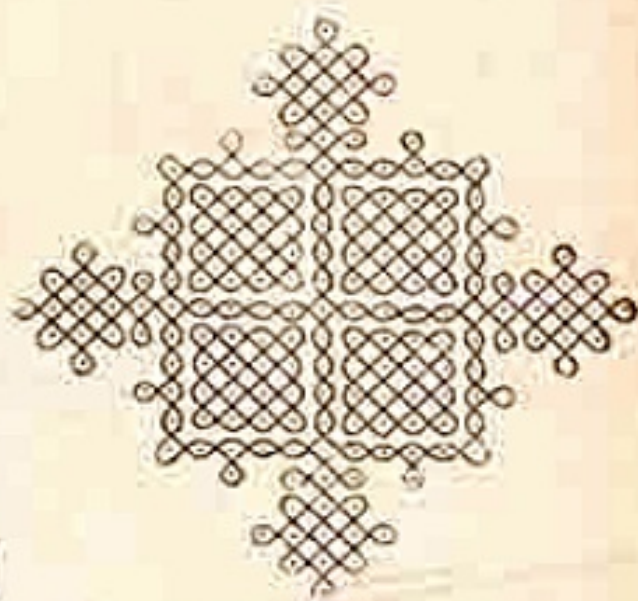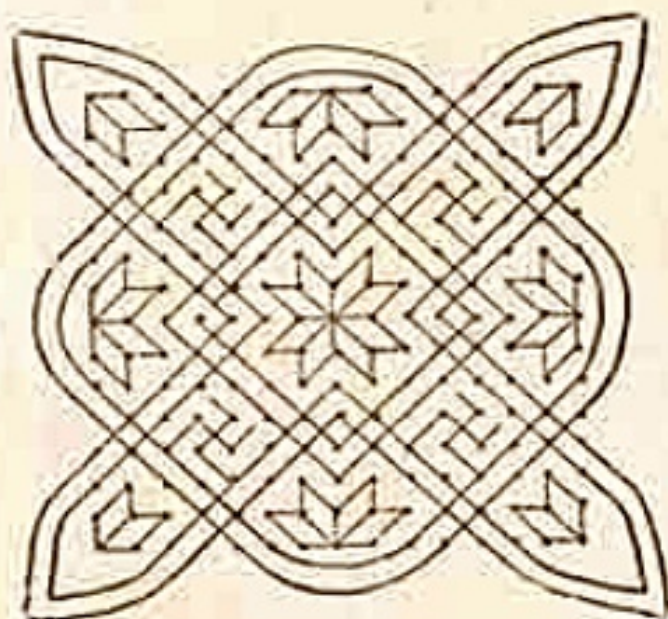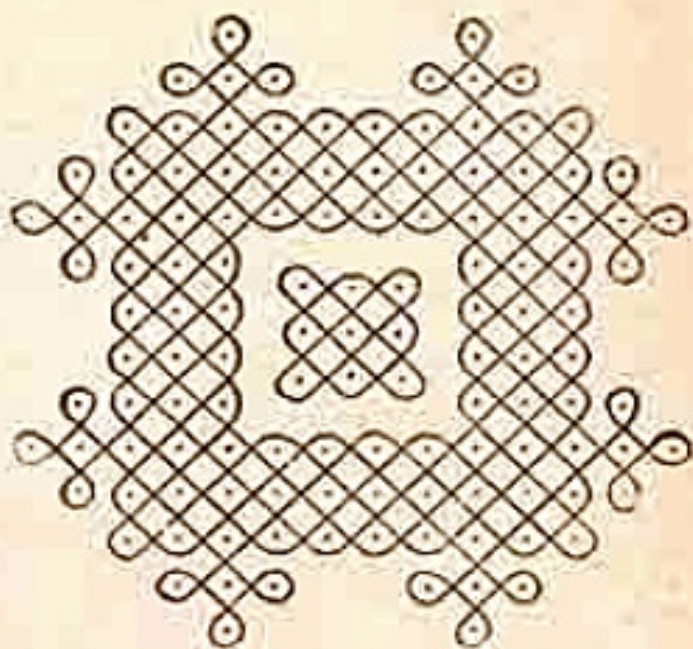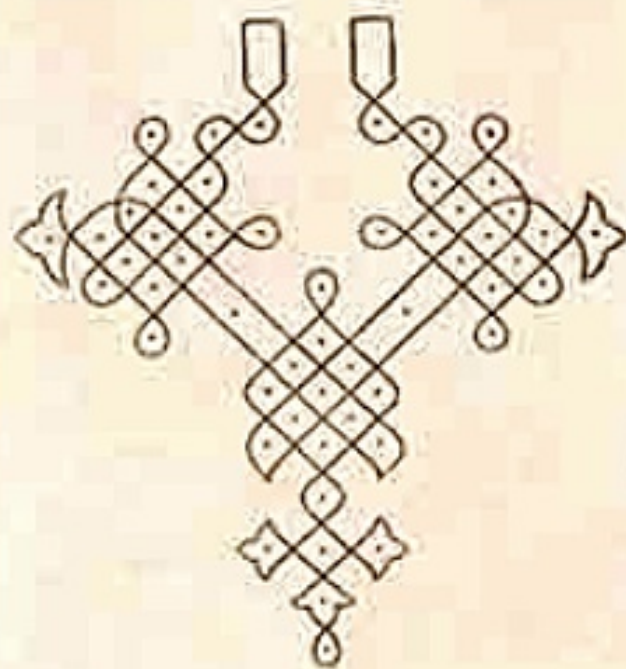
फ़ोटो - परिचयोक्ति - प्रतियोगिता

फ़रवरी १९५८ :: पारितोषिक १०)

कृपया परिचयोक्तियाँ कार्ड पर ही भेजें ।

ऊपर के फ़ोटो के लिए उपयुक्त परिचयोक्तियाँ चाहिए । परिचयोक्तियाँ दो-तीन शब्द की हों और परस्पर संबन्धित हों । परिचयोक्तियाँ पूरे नाम और पते के साथ कार्ड पर हो लिख कर निम्नलिखित पते पर भेजनी चाहिये ।

फ़ोटो - परिचयोक्ति - प्रतियोगिता
चन्दामामा प्रकाशन
वडपलनी :: मद्रास - २६

दिसम्बर – प्रतियोगिता – फल

दिसम्बर के फ़ोटो के लिये निम्नलिखित परिचयोक्तियाँ चुनी गई हैं ।
इनकी प्रेषिका को १० रु. का पुरस्कार मिलेगा ।

पहिला फ़ोटो : काले-पीले मेरे लाल ! दूसरा फ़ोटो : चलो चढ़े हम ऊँचे डाल !!

प्रेषिका : श्रीमती चन्द्रा देवी, C/O भारत मार्केटी हाउस, गोलबाज़ार, खड़गपुर.

नवयुवकों को नागरिकता का प्रशिक्षण देने तथा उनमें अनुशासन की भावना का विकास करने की दृष्टि से मध्य प्रदेश में 'नेशनल वालंटियर फ़ोर्स प्रशिक्षण शिविर' आयोजित किये जा रहे हैं। प्रत्येक शिविर के ५०० स्वयं सेवकों के पूरे दल को ३० दिनों तक प्रशिक्षण दिया जायगा!

नागपुर म्युनिसपल्टी ने, नागपुर शहर, तथा आसपास के ३४ गाँवों में, प्राथमिक शिक्षा को अनिवार्य कर दिया है। यह शिक्षा निःशुल्क होगी और २३ हज़ार बालकों को लाभ होगा। यह अपने ढंग का पहिला प्रयत्न है।

द्वितीय पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत उत्तर भारत में पाँच हज़ार स्कूल खुले थे। पंचवर्षीय योजना के समाप्त होते, किसी भी बालक को अपनी प्राथमिक शिक्षा के लिये १॥ मील से अधिक दूर न जाना होगा।

उत्तर प्रदेश की ग्राम-पंचायतों ने अपने स्थापना-काल से अब तक ग्रामीण क्षेत्रों में १२,२५० पुस्तकालयों की स्थापना की है। इस प्रयास में फैज़ाबाद और आगरा डिवीज़न क्रमशः प्रथम और द्वितीय हैं। ज़िलों में सुल्तानपुर शीर्ष स्थान पर है, जहाँ ११५५ पुस्तकालय खुले हैं। इसके

बाद गोरखपुर (६२४) और एटा (५३५) का क्रम है।

* * *

विदेशों में हिन्दी के लिए अभिरुचि बढ़ रही है। सोवियत रूस ने तो हिन्दी पुस्तकों के प्रकाशन की भी व्यवस्था की है। समाचार पत्रों से ज्ञात होता है कि पश्चिमी जर्मनी में अनेक जर्मन महिलाएँ हिन्दी सीखने के लिए काफ़ी समय देती हैं। वृद्धाएँ भी इस काम में पीछे नहीं हैं और कहती हैं कि यह 'नेहरू के देश की भाषा' है। जर्मनी में अनेक ऐसे विद्वान हैं, जो संस्कृत व हिन्दी के लिए भारी श्रद्धा रखते हैं।

* * *

प्रति वर्ष की तरह इस वर्ष भी नन्हें-मुन्हें बच्चों के महान् हितैषी हमारे प्रधान मंत्री श्री जवाहरलाल नेहरू जी की ६८ वीं वर्षगांठ स्व० गिजूभाई की जयन्ती के साथ बालोदय समाज द्वारा 'इन्दौर नगर बाल सम्मेलन' विस्तृत रूपसे इन्दौर में मनाने का आयोजन किया गया था।

* * *

संसार में शब्द अब तक केवल रोमन लिपि (अंग्रेजी) की ही टेली-प्रिंटर मशीनों (दूर मुद्रक यंत्र) का निर्माण हुआ था। अब तो देवनागरी (हिन्दी) दूसरी लिपि है, जिसमें संवादों के तुरन्त आदान-प्रदान के लिए टेली-प्रिंटर मशीनें तैयार हुई हैं। नागरी लिपि में वर्तमान 'दूर मुद्रक यंत्र' तैयार करने का श्रेय भारतीय सरकार के डाक-तार विभाग के इंजनीयरों को है। अभी यह यंत्र विकास की अवस्था में ही है और प्रति वर्ष इस में कुछ न कुछ सुधार हो ही रहा है।

चित्र-कथा
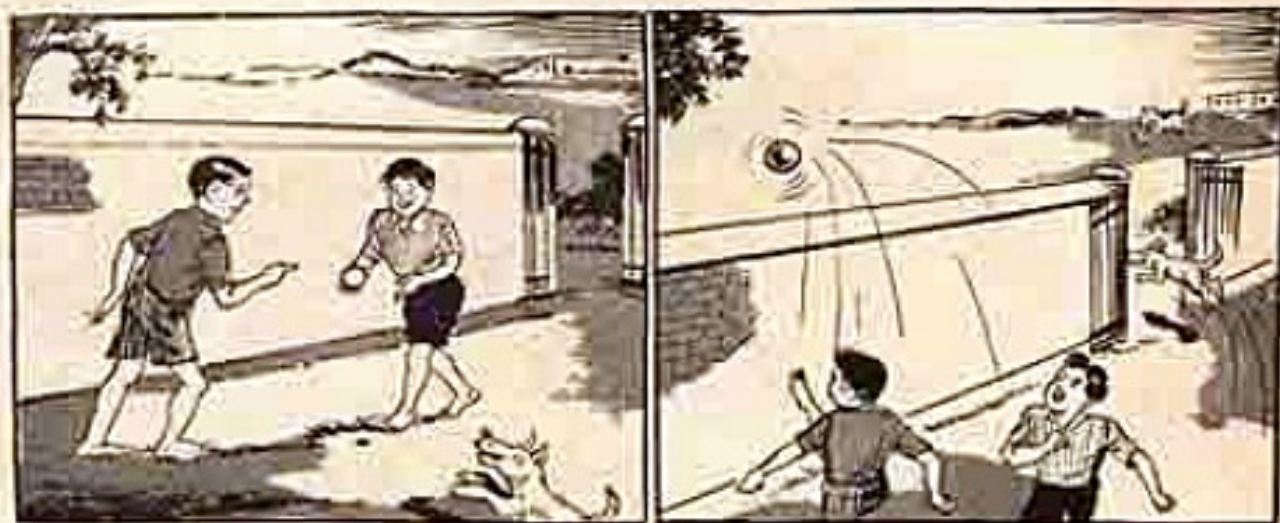
इतवार के दिन दास और वास ने एक दीवार के नज़दीक गेंद खेलनी शुरू किया : साथ में 'टाइगर' भी था। दास गेंद को अपने पैर से यों मार रहा था कि वह देखते देखते दीवार के उस पार उछलकर जाती थी। 'टाइगर' दौड़कर दीवार के उस तरफ़ जाता और गेंद को मुँह में पकड़कर ला देता। बहुत देर तक यह क्रम चलता रहा। दूर से इस खेल को एक दूसरे कुत्ते ने भी देखा। उसके मुँह में एक हड्डी का टुकड़ा था। वह कुत्ता उसे वहाँ छोड़ गेंद को लेकर भाग गया! 'टाइगर' ने गेंद की जगह हड्डी का टुकड़ा देखा और उसी को वह मुँह में दबाये वहाँ गया! दास और वास देखते रह गये।

Printed by B. NAGI REDDI at the B. N. K. Press Ltd., Madras 26, and Published by him for Chandamama Publications, Madras 26. Controlling Editor: 'SRI CHAKRAPANI'

Photo by R. L. Syed

पुरस्कृत परिचयोक्ति

चलो चढ़ें हम ऊँचे डाल !!

प्रेषिका
श्री चन्द्रा देवी, खड़गपुर

रंगीन चित्र-कथा चित्र—६